

दीपावली
8



भगवान बुद्ध के समय में अनाथ पिण्डक नाम का एक उत्तम वैश्य रहा करता था। बुद्ध के प्रति उसकी अगाध भक्ति थी। उनके चेतवन में उसने चौवन करोड़ रुपये की लागत से एक विहार बनवाया था। वह दिन में तीन बार नियमित रूप से उनके दर्शन कर जाता था। कभी कभी बुद्ध भी अपने अनुयायियों के साथ उसके घर भिक्षा के लिये जाया करते थे।

अनाथ पिण्डक का मकान सातमञ्जिला था। उसके सात प्राकार थे। बीच के प्राकार में एक क्षुद्र देवी अपनी सन्तान के साथ रहा करती थी। उसे बुद्ध का कभी कभी उस घर में आना कतई पसन्द न था । वह स्त्री का रूप धारण कर अनाथ पिण्डक के खजाञ्ची के पास गई। उससे कहा-"इस घर में बुद्ध को क्यों आने देते हो? उन जैसों का घर में पैर रखना भी बुरा है।" खजाञ्ची ने उसे डाँट-डपटकर भेज दिया। फिर वह अनाथ पिण्डक के पुत्र के पास गई। उससे भी वही कहा। उसने भी उसे डाँट बताई। वह चुप रह गई।

अनाथ पिण्डक का दिन प्रति दिन ब्यय बढ़ता गया और आय घटती गई। उसे व्यापार देखने की न फुरसत थी, न दिलचस्पी ही थी। यही नहीं, उसे अन्यत्र भी नुकसान हुआ। साथ के व्यापारियों ने उसके पास से १४ करोड़ रुपये उधार लिये; पर उन्होंने उन रुपयों को वापिस नहीं दिया। और १४ करोड़ रुपया अचिरवती नदी के किनारे कलशों में गाड़ रखा था।

नदी में बाढ़ आई। किनारे टूटे और कलश समुद्र में बह गये। इन सब कारणों के फल स्वरूप अनाथ पिण्डक गरीब होने लगा। वह भिक्षुओं को दावत तो देता था, पर दावतें पहले की तरह न होती थीं।

एक बार बुद्ध भगवान ने अनाथ पिण्डक से पूछा-"क्या अब भी दान कर रहे हो?" अनाथ पिण्डक ने बड़े खेद के साथ कहा-"स्वामी! दान में केवल चावल का माण्ड ही दे पाता हूँ।"

महात्मा बुद्ध ने उसका दुःख देखकर उसको आश्वासन दिया-"चिन्ता मत करो। जब तक चित्त शुद्ध है, चाहे दान भले ही माँड़ हो, पर वह भी अच्छा है।" अनाथ पिण्डक अब गरीब हो गया था। इसलिये क्षुद्र देवी ने हिम्मत कर उसके पास जाकर कहा-"क्यों भाई! इस बुद्ध को क्यों यहाँ आने देते हो? उसकी फिक्र छोड़ आराम से तुम अपना व्यापार करो। मैं तुम्हारे चौथे प्राकार में रहनेवाली देवी हूँ। मैं तुम्हारे हित को ही कह रही हूँ।"

अनाथ पिण्डक ने उससे कहा-"तुम तुरन्त मेरा घर छोड़कर चली जाओ।"



"जाऊँगी। नहीं तो क्या में यहाँ बैठी रहूँगी? इससे अच्छे घर मिल जायेंगे।" कहती हुई वह क्षुद देवी, बाल बच्चों को साथ ले, पिण्डक का घर छोड़कर चली गई। परन्तु उसके बहुत ढूँढने पर भी उतना अच्छा घर कही न मिला। वह पछताने भी लगी कि क्यों वह उतना अच्छा घर छोड़ आई थी। पर जो घर छोड़ आई थी, उस घर में फिर किस मुँह से जाती? इसलिये वह ग्राम देवता के पास सलाह लेने गई।

"तेरी ही गलती है कि वह घर छोड़कर चली आई। अगर तू वहाँ वापिस जाना चाहती है तो एक काम कर। व्यापारियों को १८ करोड़ रुपये अनाथ पिण्डक को देने हैं। तू अनाथ पिण्डक के नकालाई की हैसियत से उस रुपये को वसूल कर। १८ करोड़ रुपये से भरे धन कलश भी समुद्र के हवाले हो गये हैं। तू उन्हें भी खोजकर ला। फलानी जगह १८ करोड़ रुपये की सम्पत्ति है, जो अनाथ पिण्डक की है। यह कोई नहीं जानता। उस सम्पत्ति को भी उन्हें दिला। फिर उनके पास जाकर क्षमा माँग और प्रार्थना कर कि वे फिर तुझे अपने घर में रहने



दें।" ग्राम देवता ने यह सलाह दी। उसकी सलाह के मुताबिक क्षुद्र देवता ने १८ करोड़ रुपये का कर्ज वसूल किया। वह समुद्र में से धन-कलश खोज कर लाई। १८ करोड़ रुपये की सम्पत्ति भी उन्हें दिलवाई और उनसे कहा-"हुजूर! मुझे क्षमा कीजिये। मुझे अपने घर में रहने दीजिये।"

"क्षमा तुम बुद्ध भगवान के पास जाकर माँगो।" अनाथ पिण्डक ने क्षुद्र देवता से कहा। वह अनाथ पिण्डक के साथ चेतवन गई और बुद्ध के सामने सब कुछ सुनाकर उसने क्षमा माँगी।

तब बुद्ध भगवान ने कहा-"दुष्कर्म करनेवाला, जब तक उसका कर्म पूरा नहीं होता, तब तक यही सोचता है कि अच्छा काम कर रहा है। जब फल भुगतना पड़ता है, तब उसको असलियत मालूम होती है। इसी प्रकार सत्कर्म करने वाला भी जब तक उसका कर्म पूरा नहीं होता, यह सोचता है कि वह दुष्कर्म कर रहा है। फल भुगतने पर उसे सच्चाई मालूम होती है। पहली बात के लिए यह क्षुद्र देवी उदाहरण है। यह सोचती रही कि वह बहुत अच्छा काम कर रही थी और दूसरी बात का उदाहरण अनाथ पिण्डक है। यह सोच रहा था कि वह कोई दुष्कर्म कर रहा था। कर्म के पूरा होने पर ही ज्ञात हुआ कि कौन दुष्कर्म कर रहा था और कौन सत्कर्म।"

यह सुन क्षुद्र देवी की बुद्धि ठिकाने आई। भगवान बुद्ध से उसने द्वेष करना छोड़ दिया। बाल-बच्चों को लेकर, अनाथ पिण्डक के घर के चौथे प्राकार में, यथापूर्व अपना उसने बसेरा बना लिया।





[१६]

[जब होहल्ला सुनकर शिवदत्त और उसके सैनिक समुद्र के किनारे गये तो उन्हें समुद्र डाकुओं का सरदार समुद्रकेतु दिखाई दिया। उससे बचकर दो स्त्रियाँ जङ्गल में भागी जा रही थी। उनके पीछे आते हुए समुद्रकेतु का शिवदत्त ने मुकाबला किया। बाद में--]

शिवदत्त और उसके सैनिकों के झाड़ियों के पीछे भाग जाने के बाद, समुद्र के किनारे पर दो कश्तियाँ लगी और उनमें से शोर करते हुए कुछ समुद्री डाकू उतरे। समुद्रकेतु बुरी तरह थक गया था। वह हाँप रहा था। तलवार को रेत में रगड़ते हुए उसने पूछा-"तुम सब अब तक क्या कर रहे थे? वे पेड़ों की आड़ में भाग गये हैं।" वह उन पर गुस्सा करने लगा। फिर उस तरफ इशारा करते हुए जिस तरफ खियाँ भाग गई थीं, उसने आज्ञा दी-"सिर्फ यहाँ बीस आदमी रहें। बाकी सब जाकर उन स्त्री भूतों को खोजकर पकड़ लाओ।"

तुरन्त हड़बड़ाते हुए समुद्री डाकू जङ्गल की ओर भागे। समुद्रकेतु की आज्ञा शिवदत्त के कानों में भी पड़ी। वह अपने सैनिकों के साथ घनी झाड़ियों के पीछे खड़ा खड़ा यह सब देख रहा था।

"शिवदत्त! अब हमें क्या करना चाहिये? अगर हम यूँही देखते खड़े रहे



तो ये समुद्री डाकू फिर स्त्रियों को पकड़ कर ले जायेंगे।" मन्दरदेव ने कहा। शिवदत्त लाचार था। उसने सिर हिलाकर कहा-"इस हालत में हम कुछ भी नहीं कर सकते हैं। अगर हम आठ आदमियों ने इन असंख्य समुद्री डाकुओं से मुकाबला किया तो हमारा सर्वनाश हो जाएगा। अब तक वे स्त्रियाँ दूर कहीं भाग-भगाकर कहाँ छुप-छुपा गई होगी।"

आप घण्टा बीत गया। जङ्गल डाकुओं के होहल्ले से गूँज रहा था। उनका शोर सुनाई पड़ रहा था। थोड़ी देर बाद उन्होंने समुद्रकेतु के पास आकर कहा-"हुजूर! वह बुढ़िया तो दिखाई नहीं दी, हम इसे पकड़ लाये हैं।" उन्होंने एक बड़ी सुन्दर लड़की को उसके सामने पेश किया।

"अहह ह...." समुद्र हेतु ने अट्टहास फरके कहा-"हमें तो पैसा यही दिलवायेगी। उस बुढ़िया पर तो फालतू खिलाने-पिलाने का ही खर्च होगा। चलो अब नावों पर चढ़ें।" पीछे की ओर मुड़कर फिर उसने गुस्से में कहा-"हाँ! जो लोग यहाँ नये आये हैं, उन्हें तुमने पहचान किया है न? इस जगह को भी मत भूलना। मौका मिलने पर, फिर आकर उनका शिकार करेंगे।"

समुद्रकेतु की चारों नावें किनारे से अन्दर की ओर जाने लगी। शिवदत्त ने उन नावों की ओर कुछ देर तक देखकर कहा-"हम फिलहाल तो कुछ कर नहीं सकते। खाना ही खतम करें। आओ, चले।" वह अभी कह ही रहा था कि दूरी पर किसी स्त्री के रोने की आवाज सुनाई दी।

शिवदत्त को अचरज हुआ। उसने मन्दरदेव की ओर देखा, फिर उस तरफ चल दिया, जिस तरफ से रोने की आवाज़

आ रही थी। सैनिक भी उसकी देखा देखी उसके पीछे चलने लगे।

शिवदव अपने सैनिकों के साथ थोड़ी देर में उस स्त्री के पास पहुँचा। वह और कोई स्त्री न थी; वही थी, जो एक और स्त्री के साथ, समुद्रकेतु के चंगुल में से भाग निकली थी। शिवदत्त ने उसके पास जाकर पूछा-"माई, तुम कौन हो? तुम्हारा नाम क्या है? किस देश की रहनेवाली हो?"

वह स्त्री शिवदत्त के प्रश्न सुनते ही, घबराकर उसकी ओर देखने लगी। वह भयभीत हो गई। यह देख शिवदत्त ने कहा-"हमारी वजह से तुम्हारी कोई हानि न होगी। तुम्हारा एक और स्त्री के साथ समुद्रकेतु के चुंगल से भाग निकलना हमने देखा है। मेरे पास आठ सैनिक से अधिक नहीं हैं। इनको लेकर साठ डाकुओं से लोहा लेना खतरा मोल लेना है; यह सोच हमने मैदान छोड़ दिया।"

"मगर अफसोस कि स्वयंप्रभा को वे लोग फिर पकड़ करके ले गये हैं।" कहती कहती वह स्त्री जोर जोर से बिलखने लगी; रोने-पीटने लगी।



शिवदत्त उसका दुःख कम करने के लिए उसे दिलासा दिलाने लगा और यह जताने के लिए कि वह उसकी मदद भी कर सकता है, उसने उसको अपना सारा किस्सा सुना दिया। कहानी सुनकर उस स्त्री ने रोना बन्द कर दिया और कहा-"हुजुर, मेरा नाम देवमाया है। मैं शमन द्वीप की रहनेवाली हूँ। दस-बारह वर्ष पहले मुझे इस समुद्रकेतु ने कैदी बना लिया था। तब से मैं उसके नीचे गुलाम की तरह जी रही हूँ। अब वह जिस लड़की को पकड़कर ले गया है,

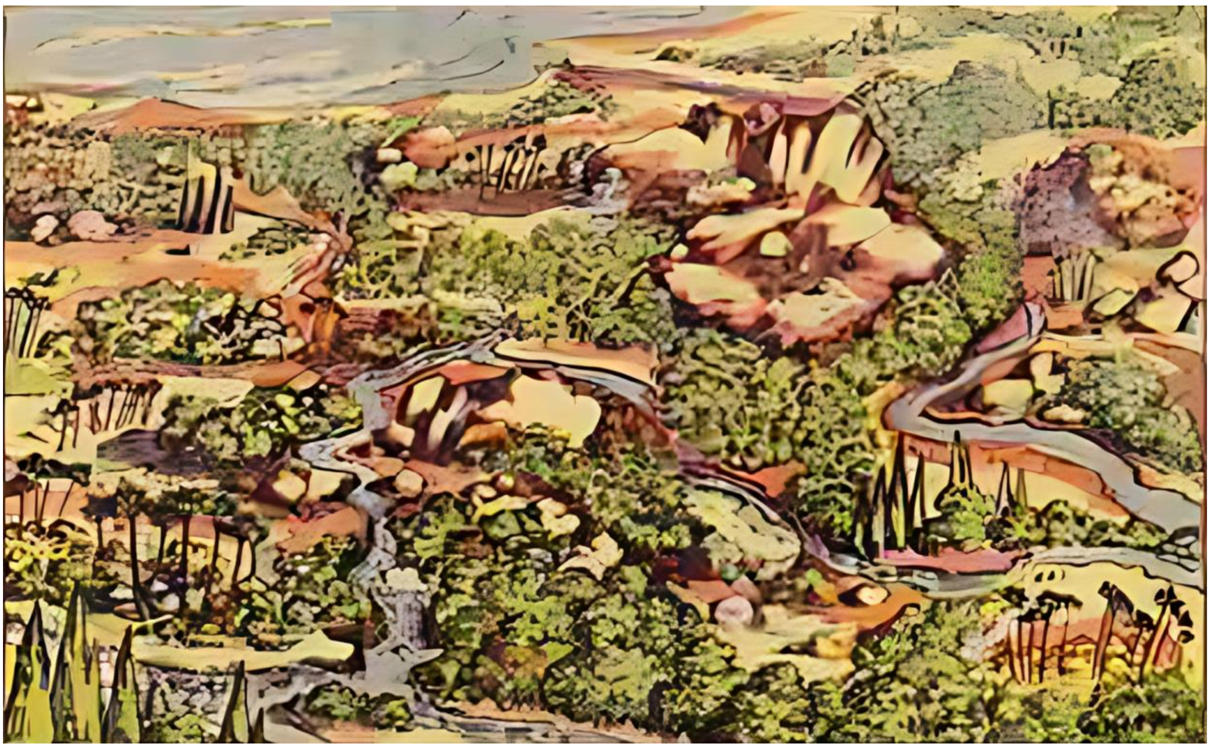
उसका नाम स्वयंप्रभा है। जालिम चार दिन पहले ही उसको शमन द्वीप के किनारे से पकड़ कर लाया था। वह बिचारी वहाँ जल-विहार कर रही थी।"

"तो यानि तुम दस बरस से उस समुद्र केतु के पास कैदी होकर रह रही हो। तो तुम उस दुष्ट के बारे में सब कुछ जानती होगी।" शिवदत्त ने कहा।

देवमाया ने सिर हिलाकर कहा-"मैं उसके बारे में सब कुछ जानती हूँ। इस द्वीप के पश्चिम दिशा में 'मकर मण्डल' नाम का एक पहाड़ी इलाका है। वहाँ पहुँचने के लिए एक ही एक रास्ता है। वहाँ कई जगह समुद्र के पानी की झीलें हैं। ऐसी एक झील के एक द्वीप में यह समुद्रकेतु रहता है।"

"तो इसका मतलब यह हुआ कि वह दुष्ट स्वयंप्रभा को वहाँ ले गया होगा। उस मकरमण्डल के रहनेवाले आदमी कैसे हैं? क्या वे लोग सभ्य हैं या जङ्गली?" शिवदत्त ने पूछा।

"उस मकरमण्डल के निवासी कलई असभ्य नहीं हैं। वे छोटे छोटे गाँवों में रहते हैं। शिकार करके वे जिन्दगी गुजर



करते हैं। उनका एक राजा भी है। परन्तु पाँच-छः वर्षों से उस इलाके में अराजकता फैली हुई है। इसकी वजह यह है कि मकरमण्डल के एक पहाड़ी झील में एक मगर ने अपना निवास बना लिया है।" देवमाया ने कहा।

"अरे! एक मगर की वजह से, भले ही वह कितना बड़ा हो, मकर-मण्डल के सारे लोग उससे डर रहे हैं? अजीब बात है।" शिवदत्त ने कहा।

"हुजूर! यह मामूली मगर नहीं है।" देवमाया ने कहा। बदसूरत वज्रमुष्टि की और डरते हुए देखकर उसने कहा-"सुना जाता है कि उस मगर के पास कई पैशाचिक शक्तियाँ हैं। उसको वे लोग 'मकर देवता' कहकर पुकारते हैं। उसके आहार के लिए, रोज वे लोग दो-तीन आदमियों को बलि देते हैं। यह काम मकरमण्डल का राजा हरिशिख स्वयं करता है। बलि के लिए आदमियों को यह समुद्रकेतु उसे बेचता रहता है।"

"तो ऐसी बात है?" शिवदत्त ने मन्दरदेव की ओर देखते हुए कहा-"यह समुद्रकेतु हरिशिख के पास से पैसा





ऐंठने के लिए इस तरह बिचारे लोगों को जोर-जबरदस्ती करके पकड़कर ले जाता रहता है। यही न?"

"मैं उस मगर को मार सकता हूँ। यदि आप अनुमति दें तो में अभी मकर मण्डल के लिए रवाना होता हूँ।" वज्रमुष्टि ने शिवदत्त की ओर देखकर कहा।

वज्रमुष्टि के यह कहते ही देवमाया का मुँह सन्तोष से खिल-सा उठा। उसने बज्रपुष्टि की ओर स्नेह से देखकर कहा-"दो बरस पहले मकरमण्डल की एक स्त्री ने देवी के प्रभाव से भविष्य में होने वाली एक घटना के बारे में कहा था-"तीन-चार फुट का एक बदसूरत व्यक्ति जल्दी ही मकरमण्डल में आयेगा। उसी के हाथ यह मगर मारा जाएगा और उसके बाद मकरमण्डल सर्व सम्पदा से सम्पन्न हो जाएगा।" देवमाया ने बताया।

देवमाया की बात सुनकर शिवदत्त हँसा। फिर उसने वज्रमुष्टि से कहा-"शायद वह बदसूरत व्यक्ति वज्रमुष्टि हो। अगर तुम उस मकरमण्डल का रास्ता दिखाओगी तो हम भी वहाँ चलेंगे।"

"रास्ते में समुद्रकेतु का घर है। उससे बनकर आगे जाना असम्भव है।" देवमाया ने काँपते हुए कहा।

"सम्भव और असम्भव की बात तो हम देख लेंगे। स्वयंप्रभा भी अब उस दुष्ट के हाथों में होगी।" मन्दरदेव ने गुस्से में कहा।

"हाँ! उसे भी समुद्रकेतु मकर देवता को बलि देने के लिए बेचने की सोच रहा है, यह मैं जानती हूँ। खूबसूरत जवान लड़कियों और लड़कों के लिए हरिशिल अधिक धन देता है। समुद्रकेतु समुद्र के किनारे उनको ढूँढ़ता फिरता है।" देवमाया ने काँपते काँपते कहा।

शिवदत्त उसकी बात सुनकर कुछ देर तक सोचता रहा। फिर उसने कहा-"देवमाया! जैसे हम से बन सकेगा इस स्वयंप्रभा की रक्षा करेंगे। उस दुष्ट समुद्रकेतु का सर्वनाश करके ही हम दम लेंगे।"

मन्दरदेव ने भी सिर हिलाकर अपनी राय प्रकट की। वह उससे सहमत था। तब शिवदत्त ने अपने सैनिकों की ओर मुड़कर कहा-"पहले भोजन कर लिया जाय, फिर मकरमण्डल की ओर चलेंगे। देरी नहीं होनी चाहिये।"

सैनिक भी इसके लिए तैयार हो गये। देवमाया के साथ वे उस जगह पहुँचे, जहाँ वे अपना भोजन अधूरा छोड़ आये थे और जल्दी खाने-पीने से निवृत हो गये। तब तक सूर्य ठीक सिर पर चढ़ आया था। कड़ी धूप हो रही थी। थोड़ी देर आराम करके शिवदत्त ने कहा-"चलो, अब चले! दिन ढल जाने से पहले यह मालूम करना होगा कि समुद्रकेतु कहाँ रहता है।"

थोड़ी देर में सब जाने के लिए तैयार हो गये। द्वीप के पश्चिम में स्थित समुद्रकेतु के निवास स्थान का मार्ग



क्योंकि देवमाया को ही मालूम था, इसलिये उसे रास्ता दिखाने का भार सौंपा गया। शिवदत्त और मन्दरदेव उसके आगे पीछे चल रहे थे।

जिस रास्ते से वे जा रहे थे वह कतई निर्जन था। न कहीं कोई पदचिन्ह दिखाई देते थे और न कोई घर बगैरह ही आस-पास थे। बड़े बड़े पेड़ों का घना जङ्गल था। तनों पर बेलें लटकी हुई थी। घास भी बढ़ी थी। इसलिये कड़ी दुपहरी में भी वहाँ अन्धेरा था। उन्हें वहाँ बड़े बड़े हिंस्र जन्तु दिखाई दिये। कई जगह तो बड़े बड़े अजगर पेड़ों से लटक रहे थे। उनसे

बड़ी होशियारी से हटकर आगे बढ़ना पड़ रहा था, कहीं ऐसा न हो कि वे उनके शिकार बन जायें।

सूर्यास्त होने से थोड़ी देर पहले, सब से आगे बढ़कर बज्रमुष्टि एक बड़े पेड़ पर चढ़ गया। उसको क़रीब एक मील की दूरी पर समुद्र के पानी की झीलें और उनके द्वीप दिखाई दिये। एक जगह उसको मनुष्यों का जमघट भी दिखाई दिया।

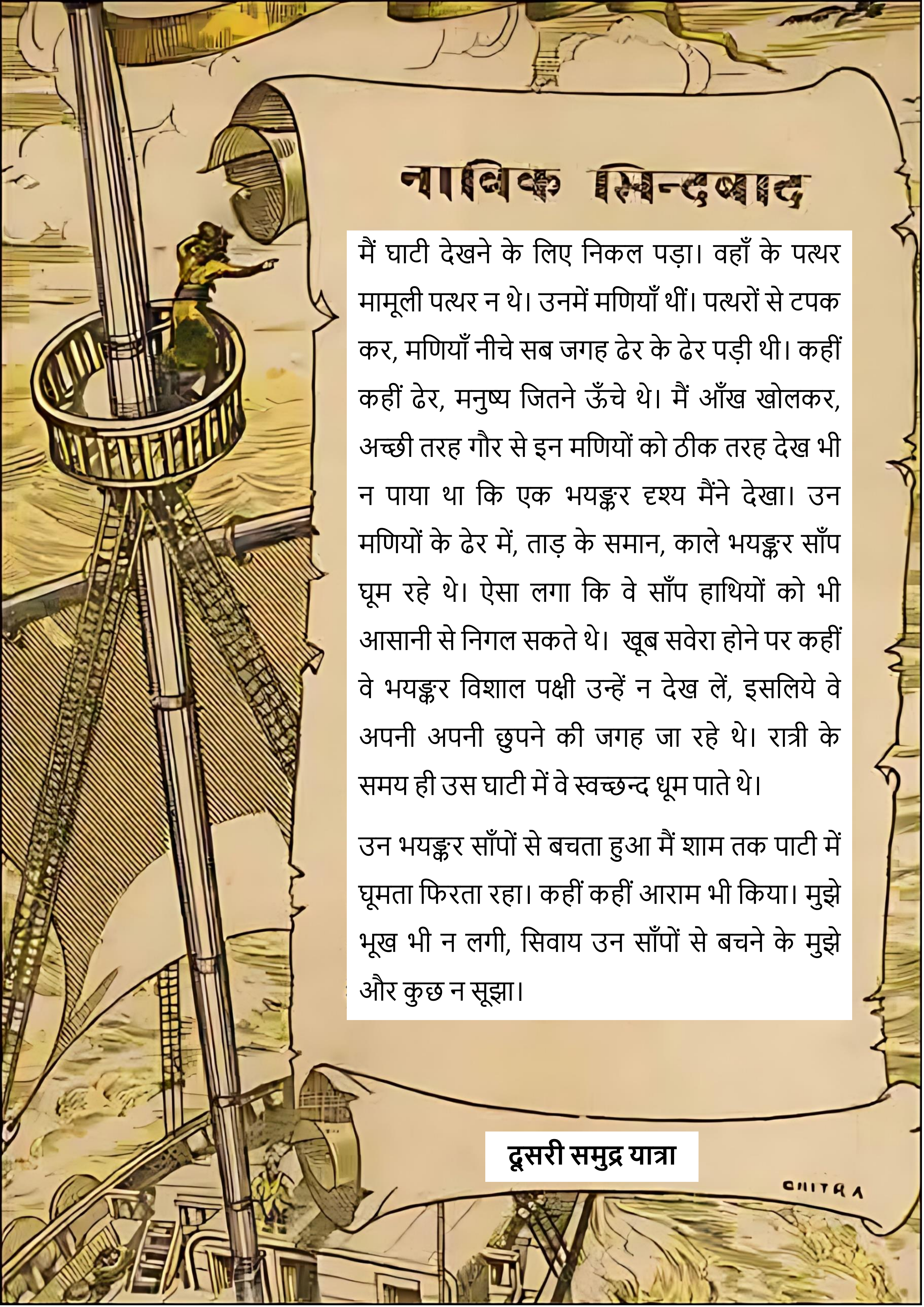
बज्रमुष्टि तुरन्त पेड़ से उत्तर आया। उसने शिवदत्त के पास जाकर कहा"हुजूर! समुद्रकेतु के निवास स्थान, जहाँ हमें देवमाया ले जा रही है, यहाँ से बहुत दूर नहीं है। पेड़ पर चढ़कर देखने से पता लगता है कि एक झील साँप की तरह मुड़ गई है। वहीं एक द्वीप भी है। उसमें एक जगह कई आदमी इकट्ठे हुए है। हो सकता है कि वे समुद्रकेतु के दल के लोग हों।"

"अगर यह बात है तो यह अच्छा नहीं कि हम सब एक साथ ही उस जगह पहुँचें। तुम दो-चार आदमियों को लेकर पहले वहाँ जाओ और वहाँ के हालचाल मालूम करके आओ।"

शिवदत्त की आज्ञा के अनुसार, बज्रमुष्टि दो सैनिकों को लेकर आगे चल पड़ा। वे पेड़ों के बीच में से होते हुए समुद्री पानी की झील के पास पहुँचे। झील के पास के पेड़ों की आड़ में से उन्होंने देखा कि झील में छोटी छोटी तमेड़ तैर रही थी। उस झील की लम्बाई-चौड़ाई चालीस-पचास गज से अधिक न थी। उसके उस पार से अजीब अट्टहास कोलाहल सुनाई पड़ रहा था।

(अभी और है)





नाविक सिन्दबाद

मैं घाटी देखने के लिए निकल पड़ा। वहाँ के पत्थर मामूली पत्थर न थे। उनमें मणियाँ थीं। पत्थरों से टपक कर, मणियाँ नीचे सब जगह ढेर के ढेर पड़ी थी। कहीं कहीं ढेर, मनुष्य जितने ऊँचे थे। मैं आँख खोलकर, अच्छी तरह गौर से इन मणियों को ठीक तरह देख भी न पाया था कि एक भयङ्कर दृश्य मैंने देखा। उन मणियों के ढेर में, ताड़ के समान, काले भयङ्कर साँप घूम रहे थे। ऐसा लगा कि वे साँप हाथियों को भी आसानी से निगल सकते थे। खूब सवेरा होने पर कहीं वे भयङ्कर विशाल पक्षी उन्हें न देख लें, इसलिये वे अपनी अपनी छुपने की जगह जा रहे थे। रात्री के समय ही उस घाटी में वे स्वच्छन्द धूम पाते थे।

उन भयङ्कर साँपों से बचता हुआ मैं शाम तक पाटी में घूमता फिरता रहा। कहीं कहीं आराम भी किया। मुझे भूख भी न लगी, सिवाय उन साँपों से बचने के मुझे और कुछ न सूझा।



ढूँढते ढूँढ़ते मुझे एक गुफा दिखाई दी। वह मुश्किल से मेरी जितनी थी। यह सोच कि रात भर वहाँ रह सकूँगा, बाहर एक बड़ा पत्थर रख, मैं रेङ्गता रेङ्गता अन्दर गया। थोड़ी दूर जाने पर मुझे यह पता लगा कि मैं गुफा में न घुस कर एक काले साँप की चौकड़ी में घुस रहा था। वह साँप अपने अण्डों की रखवाली के लिए, चारों तरफ अपने को लपेट कर पढ़ा हुआ था। यह पता लगते ही मेरे होश-हवाश जाते रहे। मैं बेहोश गिर पड़ा।

जब मुझे होश आया और में पत्थर हटाकर बाहर निकल सका, तबतक सबेरा हो चुका था। मेरी टाँगें चीथड़ों की तरह हो गई थीं। मैं खड़ा नहीं हो पाता था। भूख के कारण में सूख गया था। आराम के न होने से कतई कमजोर हो गया था। अभी जिन्दा था, यह ही काफी था। गनीमत थी कि वह साँप मुझे निगल नहीं गया था। मैं खड़े होकर, चारों तरफ देख ही रहा था कि मेरे पास, पत्थरों पर माँस का एक टुकड़ा गिरा। मैंने घबराकर सिर उठाकर देखा। परन्तु मांस का टुकड़ा फेंकने वाला मुझे कहाँ वहाँ दिखाई नहीं दिया।

इतने में मुझे छुटपन की एक बात याद आ गई। वह मैंने उन लोगों से सुनी थी, जो रत्नों वाले द्वीपों में होकर आये थे। बात यह थी कि जो लोग रत्न इकट्ठे करने आते हैं, वे भेड़ो को काटकर, माँस के टुकड़े पर्वत पर से घाटियों में धकेल देते हैं। वे जब मणियों पर पड़ते हैं तो मणि उनमें चिपक जाती है। तब बड़े बड़े पक्षी आकर उन टुकड़ों को उठाकर पहाड़ों पर अपने घोसले में ले जाते हैं। तब रत्न ढूँढने वाले शोर-शराबा करके पक्षियों को भगा देते हैं

और माँस में चिपके हुए मणियों को ले लेते हैं।

यह बात याद आते ही उस घाटी से बाहर जाने का उपाय भी मुझे सुझा। मैं तुरन्त बड़े बड़े मणियों को लेकर उन्हें जेबों में, जंधिये में, जहाँ बन सका वहाँ रखने लगा। फिर मैने अपनी पगड़ी उतारी और मांस के टुकड़े को अपने पेट पर बाँध लिया। फिर सीधा लेट गया। थोड़ी देर में एक पक्षी आया। माँस के टुकड़े को अपने नाखूनों में रख, मुझे आकाश मार्ग द्वारा घाटी से उठा, अपने घोसले के पास ले गया। फिर वह मेरे पेट से बँधे माँस के टुकड़े को और मुझे भी, काट काट कर अपने बच्चों को देने लगा। सौभाग्य से उसी समय बड़ा होहल्ला होने लगा। पक्षी उड़ गया। मैं उठ खड़ा हुआ। मेरा मुख और कपडे खून से तर थे।

इस बीच में वहाँ एक व्यापारी भागा भागा आया और मुझे देख हक्का वक्का रह गया। पर मुझ को हिलता न देख, और यह जान कि उसको मुझसे कोई खतरा न था, वह हिम्मत



करके आगे आया और मांस के टुकड़े को गौर से देखने लगा। उसमें कोई मणि न थी। वह हाथ उठाकर "अल्लाह! धोखा, दगा" चिल्लाता तालियाँ पीटने लगा।

मैंने उससे बड़ी अदब से बातचीत की। पर उसका अदब से बात करना तो दूर वह गुस्से से पूछने लगा-"तुम कौन हो? मेरा धन लूटने के लिए तुम यहाँ क्यों आये हो?"

"डरिये मत सेठजी। मैं चोर नहीं हूँ। आपका मैंने कुछ चुराया भी नहीं है। मुझे देखकर आप कोई भूत हूँ या पिशाच

हूँ, यह मत समझिये। मैं मनुष्य हूँ। व्यापारी हूँ। मैंने बहुत अजीब चीज देखी है। मेरा यहाँ होना ही एक विचित्र किस्सा है। वह किस्सा मे आपको सुनाता हूँ। परन्तु पहले मैं आपको सस्नेह कुछ मणियाँ देना चाहता हूँ। लीजिये। मैं उनको उस जगह से चुन कर लाया हूँ, जहाँ अभी तक मनुष्य के पैर नहीं पहुँचे हैं।"

यह कहते हुए मैंने कुछ मणियों को..... कई एक बड़ी बड़ी भी, उस व्यापारी के हाथ में रखी। तब वह बड़ा खुश हुआ और भाट की तरह मेरी प्रशंसा करने लगा। उसने कहा- "इसमें से एक मणि काफी है। मैं जन्म भर ऐशो-आराम से रह सकता हूँ। मैंने पहले अपनी जिन्दगी में इतनी कीमती मणियाँ कभी न देखी थी। राजाओ के पास भी इतनी बहुमूल्य मणियाँ नहीं होती हैं।"

इतने में और व्यापारी भी वहाँ जमा हो गये। उन सबको मैंने अपनी कहानी सुनाई। मेरी कहानी सुनकर वे बड़ी देर तक आचरज करते रहे। उन्होंने कहा-"आप अल्लाह की मेहरवानी से ही उस



घाटी से बाहर निकल पाये हैं। नहीं तो वहाँ से आना आदमी के बस में नहीं है।" यह देख कि मैं भूख के कारण काँटा हो रहा था, वे मुझ पर दया कर अपने तम्बुओं में ले गये, और वहाँ मुझे उन्होंने खाना खिलाया पिलाया। तम्बू में मैं एक रात और एक दिन सोता रहा।

अगले दिन, हम सब मिलकर पहाड़ों से उतरकर समुद्र के किनारे गये। वहाँ से नौकाओं में बैठकर कपूर द्वीप में गये। वहाँ बड़े बड़े कपूर के पेड़ थे। कड़ी से कड़ी धूप में भी उन पेड़ों के नीचे ठण्ड रहती थी। एक एक पेड़ के नीचे सौ सौ आदमी एक साथ आराम कर सकते थे। इन पेड़ों की खाल उतार दी जाती है। और जब उनमें से रस टपकता है तो उस रस को इकट्ठा कर उसमें से कपूर निकाला जाता है।

मैंने इस द्वीप में एक बड़ा हरिण देखा। होने को तो वह खड्ग मृग की जाति का था; पर वह उससे कहीं अधिक बड़ा था। वह ऊँट से भी बड़ा होता है। उसके सिर पर दस फुट लम्बे सीङ्ग होते हैं। वह साधारण रूप से घास वगैरह चरता रहता



है। मगर कभी कभी अगर उससे भिडन्त हो गई तो हाथी भी उसके सामने टिक नहीं सकता था। वह हाथी को भी अपने सीङ्गों से भोककर उसको उठाकर फेंक देता है। हाथी मर जाता है; पर हाथी का मद उस हरिण की आँखों में गिर पड़ता है और वह देख नहीं पाता। इस हालत में बड़ा विशाल पक्षी आकर उन दोनों को उड़ा ले जाता है।

इस द्वीप में मैने और कई प्रकार के जीव-जन्तु देखे।

उस द्वीप में हमने आराम से कुछ दिन बिताये। मैंने अपनी कई मणियों को बेचकर बहुत सेना चान्दी भी खरीद लिया था। उनको ढोने के लिए एक नाव काफी न थी। वहाँ से रवाना हो इस कितने ही द्वीपों में गये। नये नये देश, नये नये शहर देखते हुए, व्यापार करते हुए हम बसरा पहुँचे और वहाँ से नदी में होते हुए बगदाद आ गये। ढेर-सा सोना, बेशुमार रत्न, कीमती मणि लेकर में घर गया। बन्धु-मित्र मुझे देखकर बड़े खुश हुए। जिस किसी से जान पहचान थी, उन सबको बिना भूले मैंने तोहफ़े भेजे।

उस दिन से अच्छे अच्छे पकवान खाता, मधुर पेय पीता, कीमती कपड़े पहनता, गद्दोवाले पलङ्गों पर सोता वैभव के साथ जिन्दगी बिताने लगा। हमेशा यार-दोस्त मुझे घेरे रहते।

रोज मुझसे मिलने बड़े बड़े लोग आते, और दूर दूर देशों की बातें सुनाते। जो वे चाहते मैं बताता। जो काई मेरे अनुभव सुनता, मुझे बधाई देता। यों दूसरी समुद्र यात्रा समाप्त हुई। (अभी और है)





एक गाँव में बिहारी नाम का एक बाजीगर रहा करता था। वह हर साल कुछ दिनों के लिये गाँव गाँव में फिरता, और चाराहों पर खड़ा होकर, गला फाड़-फाड़कर चटपटी बातें करता। फौरन गाँव के बच्चे, नौजवान जमा हो जाते।

बिहारी, वे सब हुनर जो उसने गुरु से सीखे थे, हर जगह, बिना भूले दिखाता। वह गेन्दों से जादू करता, तलवार के पैंतरें दिखाता। आखिर जो कुछ दर्शक देते, उसे लेकर चला जाता।

बाजीगरी में, सब का कहना था, बिहारी को मात करनेवाला कोई न था। परन्तु उसकी आमदनी इतनी थी कि दो जून ठीक खाना भी न मिलता था। बहुत गरीबी में दिन कटते थे।

"यह जिन्दगी इस तरह गुज़रती गई; अगर सुख न भी मिले, तो मुझे कोई अफसोस नहीं। यह काफी है। अगर अगले जन्म में भगवान की दया से कुछ सुब मिले।" बिहारी सोचा करता।

बिहारी के गाँव में एक देवी का मन्दिर था। आसपास के गाँववालों का विश्वास था कि उस देवी की महिमा अपार थी। नवरात्री के दिनों में दूर दूर से लोग आते, उत्सव मनाते, सैकड़ो रुपया खर्च करते। यद्यपि बिहारी भूखा नङ्गा गाँव गाँव घूमता-फिरता, तो भी नवरात्री के दिनों में ज़रूर अपने गाँव में पहुँच जाता।

होते होते बिहारी और भी गरीब हो गया। बाजीगरी में यद्यपि कोई कसर न थी, तो भी उसकी आय हर रोज घटती

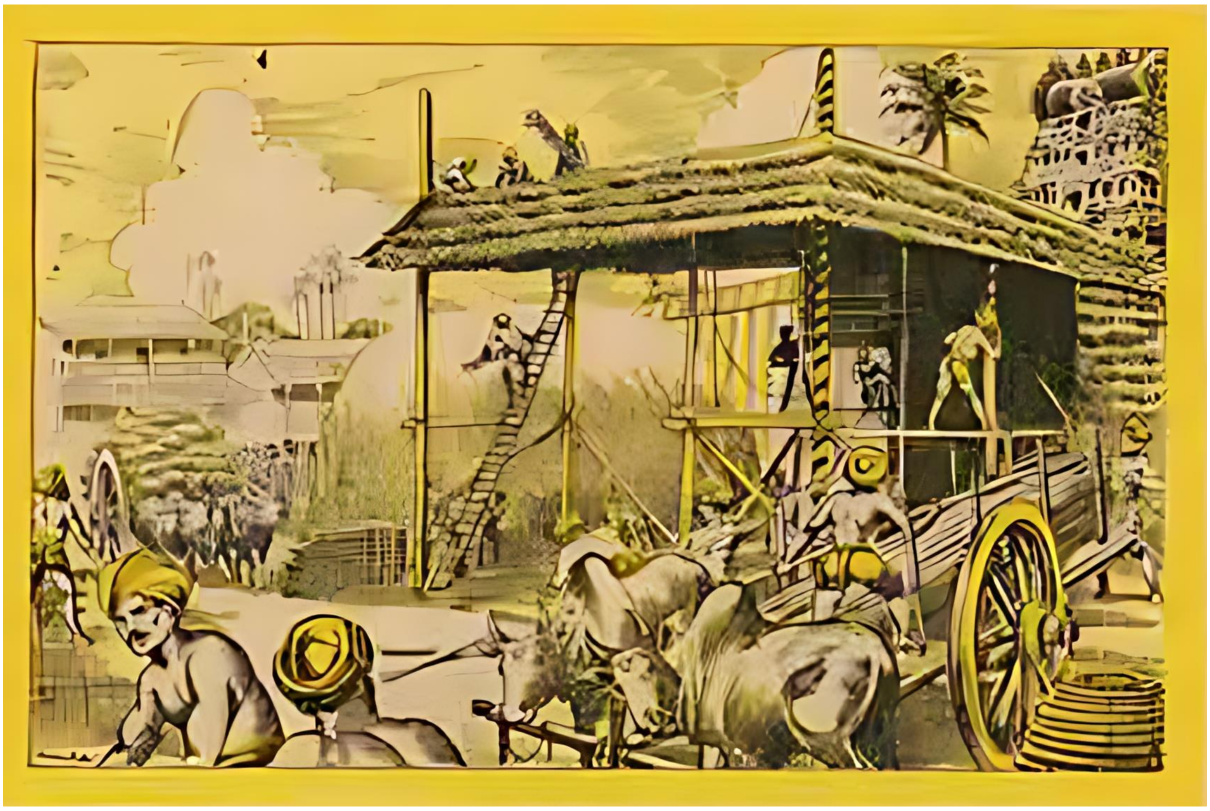
श्री सुरेशचन्द्र

जाती थी। क्योंकि आसपास के गाँवबालों ने उसका जादू सैकड़ों बार देख रखा था। उन्हें उसके जादू में कोई नयी चीज न दिखायी देती थी।

यूँ तो वह पहले ही गरीब था। परन्तु उम्र के साथ साथ वह और भी गरीब होता जाता था।

जैसे जैसे इस दुनीयाँ में उसका सुख कम होता जाता था, वैसे वैसे उसकी परलोक की सुख की आकाक्षा प्रबल होती जाती थी। उसने गाँवों में फिरना कम कर दिया। अधिक समय वह मन्दिर में ही बिताने लगा।

नवरात्री का उत्सव आया। सब उत्सव के काम में मग्न थे। गाँव के लड़के देवी के लिए फूल इकट्ठा कर रहे थे। आराधना के लिए गाड़ियों में धान्य, शाक-सब्जी आ रही थी। मन्दिर के चारों ओर पण्डाल बनाया जा रहा था; तोरण बाँधे जा रहे थे। यह सब देख बिहारी तन्मय हो गया। "पुण्यात्मा हैं। वह देवी भी इन सब को अपनी कृपादृष्टि से देखे बगैर कैसे रह सकती है? ब्राह्मणों का तो कहना ही क्या? वे मन्त्र पढ़ते हैं। पूजा करते हैं। जाने कितना ही पुण्य कमाते हैं।" वह सोचा करता।



सोचते सोचते उसे अफसोस होने लगा-"इस उत्सव में कुम्हार, बाजेवाले, गायक, उपदेशक; आखिर रसोइये, कहार भी, देवी की भरसक सेवा कर पुण्य कमा रहे हैं। पर मैं कुछ नहीं कर रहा हूँ। कुछ कर नहीं पाता हूँ।" बिहारी ने एक लम्बी साँस खींची।

उत्सव प्रारम्भ हुआ। नौ दिन तक दिन-रात मन्दिर में धूम मची रही। इस जलसे को देखकर बिहारी को सन्तोष भी हुआ और दुख भी। "इतने लोगों ने इतने ढङ्गों से देवी की सेवा की है। मैने क्या किया है?"

नौवें दिन उसे एक बात सूझी और उस बात से उसका सारा दुख काफूर हो गया।

उस दिन रात को पूजा खतम हुई और सब चले गये। कहीं प्रसाद बाकी न रह गया हो, यह देखने के लिए पुजारी का मन्दिर में पैर रखना था कि एक अजीब घटना घटी। सिन्दूर, फल, फूलों से लदी देवी की मूर्ति के सामने बिहारी तलवार चला रहा था। गेंद के जादू दिखा रहा था।

पुजारी ने तुरन्त धर्मकर्ता के पास जाकर कहा-"देखिये, बिहारी क्या कर रहा है।"



"क्या कर रहा है?" धर्मकर्ता ने हड़बड़ाते हुए पूछा।

"मन्दिर में देवी की मूर्ति के सामने बाज़ीगरी कर रहा है।"

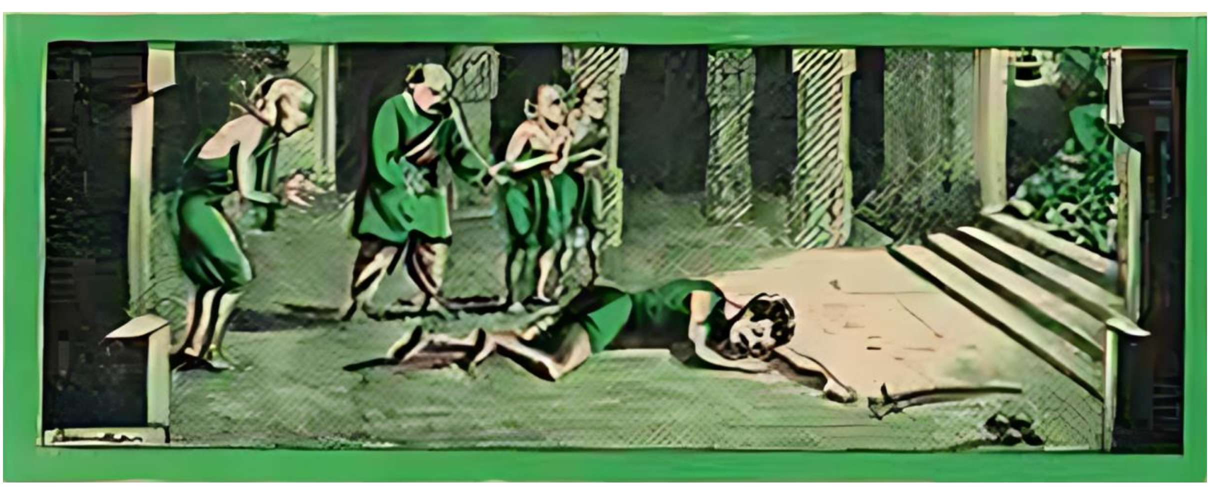
"तुम आकर शस्त्री जी, और शर्मा जी को बुलाकर लाओ।" पुजारी को उनके पास भेज, धर्मकर्ता स्वयं मन्दिर गया। वह चुपचाप मन्दिर के किवाड की आड़ में खड़ा हो, छिद्र में से अन्दर देखने लगा। वह यकायक काँपने लगा।

मन्दिर में बिहारी इस तरह पड़ा था, जैसे सो रहा हो। देवी उसका सिर अपनी गोद में रख, एक हाथ से पंखा झलती, दूसरे हाथ से साड़ी का छोर पकड़ उसका पसीना पोछ रही थी। जहाँ देवी की मूर्ति होने चाहिये थी, वह वहाँ न थी। आश्चर्य की बात थी।

तुरन्त धर्मकर्ता दरवाजे के पास साष्टाङ्ग कर देवी की स्तुति करने लगा। इस बीच में, शास्त्री जी और शर्मा जी आदि को लेकर पुजारी भी वहाँ पहुँचा। उन्होंने धर्मकर्ता को देखकर पूछा-"क्यों जी! क्या बात है?"

धर्मकर्ता उठा। सब मन्दिर में घूमे। मूर्ति अपनी जगह पर थी। बिहारी आराम से सो रहा था। धर्मकर्ता ने स्वयं जो दृश्य देखा था उसके बारे में उसने दूसरों को भी बताया।

ब्राह्मणों को विश्वास न हुआ। परन्तु मन्दिर में देवी के पद चिन्ह साफ दिखायी दे रहे थे। मूर्ति की साड़ी का छोर पसीने से भीगा हुआ था। "हम सब ढोङ्गी भक्त हैं। बिहारी ही देवी का लाड़ला लड़का है।" धर्मकर्ता ने कहा।





किसी जमाने में, श्रावस्ती नगर में सुमन्त नाम का समझदार युबक रहा करता था।

पिता के मरने के बाद, वह माता का बड़ी लगन से पालन-पोषण किया करता। उसको सुखी रखने में ही उसका सारा समय बीत जाता। इसलिए वह कोई काम-धन्धा भी रोजी के लिए न कर पाता। यह देख उसकी माता ने कहा-"बेटा, तुम ही एक घर में आदमी हो। विवाह कर लो, तुम्हारी पत्नी मेरी देख-भाल करेगी और तुम समय निकालकर कोई काम-काज कर सकोगे।"

वह माता की बात को अस्वीकार न कर सका। उसने शादी कर ली। उसकी पत्नी बहुत सुन्दर थी। वह उसके साथ बहुत प्रेम से रहने लगा। पत्नी जान गई कि उसका पति अपनी माता को भी बहुत प्रेम करता था। उसने सोचा-"मेरा पति जब माता के होते हुए ही मुझे इतना प्रेम कर रहा है, अगर वह न हो तो जाने कितना प्रेम करेगा।" उसने माँ-बेटे में झगड़ा पैदा करने की ठानी। उसने पति से सास के बारे में चुगली की-"तुम्हारी माँ की मुझ से बनती ही नहीं है। हर बात की नुक्ताचीनी करती है। अगर गरम भोजन परोसती हूँ तो पूछती है कि भोजन क्यों गरम है। भोजन ठण्डा हो जाता है, तो पूछती है कि वह ठण्डा क्यों है। भरसक उन्हें खुश करने की कोशिश कर रही हूँ। पर उनको खुश करना मेरे बस की बात नहीं पत्नी है।" कहते कहते आँखें भी तर कर ली।

कुमारी उषा भटनागर

सुमन्त को पत्नी की बातों पर विश्वास हो गया। उसने एक दिन माँ से कहा-"माँ, लगता है तुम यहाँ सुखी नहीं हो। कहीं और जाकर रहोगी क्या?"

वह ताड़ गयी कि यह सब बहू की चुगली का फल था। "अच्छा तो, बैसा ही करूँगी।" बुढ़िया ने कहा। वह गाँव में, बन्धुओं के घरों में नौकरी चाकरी करती, वे जो देते खाती, मुसीबतें झेलती झेलती दिन काटने लगी।

सास के चले जाने के बाद पत्नी को गर्भ हुआ। नौ महीने बाद उसने एक लड़के को जन्म दिया। "जब तक मेरी सास यहाँ थी मेरी कोख ही न फली। वह गयी कि नहीं कि बच्चा पैदा हुआ है।" वह अपनी सहेलिया से कहती। कुछ को तो उसकी बातों पर यकीन हो गया, और कुछ ने जाकर उसकी सास से कहा-"जानती हो, तुम्हारी बहू क्या कह रही है? कह रही है कि जब तक तू वहाँ रही, तब तक उसके सन्तान ही न हुई।"

बुढ़िया यह सुनते ही खौल उठी। "अब क्या जिन्दगी में रखा है? धर्म



ही मर गया है। मैं अब उसका श्राद्ध करूँगी।"

यह सोच वह कुछ चावल और तिल लेकर, श्मशान में गयी। वहाँ एक चूल्हा बनाकर, हँडिया में उन्हें पकाने लगी।

उसी समय एक मुनीश्वर उस तरफ से गुजरा। उसने बुढ़िया को देखकर पूछा-"क्यों माई! कौन गुज़र गया है? क्यों श्मशान में रसोई बना रही हो?"

"तुम नहीं जानते बेटा! धर्म मर गया है। उसी को यह पिण्ड चढ़ा रही हूँ।" बुढ़िया ने कहा।

"अरे, धर्म का क्या मरना! तुमसे किसने यह कहा है?" मुनीश्वर ने पूछा।

"किसी के कहने की जरूरत है? मुझे खरी-खोटी सुनाकर बहू के घर से निकाल देने के बाद क्या उसने बच्चे को जन्म नहीं दिया है? क्या धर्म नहीं मरा?" बुढ़िया ने पूछा।

मुनीश्वर ने बुढ़िया की कहानी सुनकर कहा-"तुम्हारे लड़के, और तुम्हारी बहू ने मिलकर तुम्हारी यह हालत की है। मैं अपनी तपस्या से उनको भस्म किये देता हूँ।" कहता कहता वह कमण्डल से पानी निकालकर हथेली पर डालने लगा।

तुरत बुढ़िया ने उसको रोकते हुए कहा-"बेटा! ठहरो! जाने दो। अगर वे चले गये तो मेरा पोता विचारा अनाथ हो जायेगा, कोई देखनेवाला न रहेगा।"

बुढ़िया ने अपनी आँखों से अपने पोते को देखा भी न था, पर मुनीश्वर उसका पोते के पति प्रेम देख, मुस्कराता चला गया।

इस बीच में यह बात गाँव में फेल गई कि वह श्मशान में मृत धर्म का श्राद्ध करने गयी है। सुमन्त, और उसकी पत्नी और लोग भी भागे भागे श्मशान गये।

"यह क्या कर रही हो माँ? आओ, घर चलें।" लड़के ने कहा।

बहू ने सोचा कि उसकी पोल खुल जायेगी। कहीँ सास सब के सामने उसको बुरा भला न कहे। वह डर गई। उसने कहा-"मेरी अक्ल मारी गई थी। मुझे माफ़ करो, सास जी।"

बुढ़िया खुश हुई और उनके साथ चली गई। वह पोते को पालती पोसती, सब कुछ भूल गई और उनके साथ आराम से बची-खुची जिन्दगी बिताने लगी।





फ्रीजिया देश में ट्रोय नाम का नगर एक था। उस नगर के राजा का नाम वर्धन था। उसकी गर्भवती पत्नी को एक बार सपना आया कि उसके गर्भ से एक मशाल पैदा हुई है और उसे मशाल की लपटों से ट्रोय नगर और ईड़ा पर्वत जलकर भस्म हो गया है। वह भय के कारण चिल्लाती हुई तुरन्त उठ बैठी। उसने अपने पति से सपने के बारे में कहा।

वर्धन के कई लड़के थे। उनमें से एक का नाम ज्ञानी था, जो भविष्य के बारे में बता सकता था। इसलिये वर्धन ने ज्ञानी को बुलाकर उसकी माँ के सपने के बारे में पूछा। "जो पैदा होने जा रहा है, उससे हमारे नगर को बड़ी हानि होगी। इसलिये उसको पैदा होते ही मरवा दीजिये।" ज्ञानी ने पिता को सलाह दी।

कुछ दिनों बाद शाम को जब अन्धेरा हो रहा था तो वर्धन की पत्नी ने एक लड़के को जन्म दिया। ज्ञानी की सलाह के अनुसार उस बच्चे को तुरन्त न मरवा कर वह काम राजा ने पशु-पालक के लिए छोड़ दिया। पशु पालक अपने पशुओं के साथ ईड़ा पर्वत पर रहा करता था। राजा से खबर पाते ही वह दौड़ा दौड़ा उसके पास गया। राजा के हुक्म के मुताबिक वह बच्चे को ईड़ा पर्वत पर मारने के लिए एक चोटी पर ले गया।



पर वह उस छोटे दुध-मुँह बच्चे को अपने हाथों से न मार सका। उसे दया आ गई। इस लिये उसे एक चोटी पर छोड़ वह घर चला गया। पर वह बच्चा मरा नहीं। क्योंकि कहीं से कोई मादा भालू आया और उस अनाथ बच्चे को उठाकर ले गया। उसने अपना दूध उसे पिलाया। धूप-सरदी से उसकी रक्षा की।

पाँच दिन बाद पशुपालक फिर उस चोटी पर गया। उस बच्चे को भालू की देखरेख में सुरक्षित पा उसे बड़ा अचरज हुआ। उसे उसमें दैब कृपा दिखाई दी। वह जान गया कि उस बच्चे की किस्मत में असमय मृत्यु न लिखी थी। भालू के दूर जाते ही वह बच्चे को थैले में डालकर घर ले गया। क्योकि लड़का बहुत सुन्दर था, इसलिये उसने उसका नाम मोहन रखा।

इस तरह मौत से बचकर, मोहन पशु-पालक के घर में ही बड़ा होने लगा। बचपन से ही उसमें असाधारण बुद्धि, बल, और सौन्दर्य था। वह बच्चा ही था कि कुछ चोर उसकी गाय चुरा ले गये। मोहन ने अकेले ही उनका पीछा किया और उनको मार भगाकर अपनी गाय वापिस ले आया। मोहन को बैलों को लड़ाने का शौक था। जो बैल जीतता, उसके सीङ्गों पर फूल बाँधता और जो हारता उसके सोंगों पर पुआल लपेटता। और जो

सब बैलों को जीत लेता, उसको दूसरे झुण्ड़ के बैलों से लड़वाता और कहा करता कि वह उसके सीङ्गों पर सोना मढवा देगा।

* * * *

जब मोहन ईड़ा पर्वत पर गाय चरा रहा था, तब देवलोक में एक विचित्र घटना घटी। एक जगह विवाह हो

रहा था। वहाँ देवी-देवता, अप्सरा वगैरह एकत्रित हुए। उसी समय कलह-प्रिया नाम की अप्सरा ने उनके बीच एक सोने का फल फेंक दिया। उस फल पर लिखा था- "अत्यन्त सौन्दर्यवती के लिये।" एकत्रित अतिथियों में केवल तीन अप्सराएँ ही उस फल के लिये लड़ने-झगड़ने लगीं। उनका नाम भूपुत्री, बुद्धिमति और कामिनी था।



कोई यह फैसला न कर पायी कि उनमें अत्यन्त सौन्दर्यवती कौन थी। इसलिये वे सीधे देवनाथ के पास गई, और उनसे कहा कि ये यह निश्चय करके बतायें कि उनमें सबसे अधिक सुन्दर कौन थी।

"यह फैसला में नहीं कर सकता हूँ। ईड़ा पर्वत पर रहनेवाले मोहन के पास जाकर अपने झगड़े का फैसला करवाओ।" देवनाथ ने उनको सलाह दी।

जब तीनों अप्सराएँ देवलोक से ईड़ा पर्वत पर पहुँच रही थीं तब मोहन उसकी सब से बड़ी चोटी पर बड़े मौन में अपनी गायें चरा रहा था। वे उसके पास गई। उसके हाथ में सोने का फल रखकर कहा-"मोहन! तुम सुन्दर हो, बुद्धिमान हो। हममें से कौन सबसे अधिक सुन्दरी है, यह निर्णय करके, उसको यह फल दे दो। यह देवनाथ की आज्ञा है।"

"देवी! मैं गो-डङ्गर चराने वाला मामूली आदमी हूँ। मैं अप्सराओं के सौन्दर्य को कैसे परख सकता हूँ? यह काम में कैसे कर सकता हूँ? अगर आप चाहें तो मैं इस फल के तीन बराबर भाग करके दे सकता हूँ। तीनों भाग आपस में आप बाँट लेना।" मोहन यों अपनी नादानी दिखाते हुए गौओ के पास जाने लगा। "यह देवनाथ की आज्ञा

आज्ञा का उल्लंघन किया तो बड़ा खतरा है।" अप्सराओं ने उसे डराया धमकाया।

"अच्छा, तो आपको मेरा निर्णय मानना होगा। यह नहीं होना चाहिये कि जो हार जायें वे मुझ से नाराज हो उठे। मैं आखिर मनुष्य ठहरा। अगर गलती भी कर बैठा तो आपको बुरा नहीं मानना चाहिये। मैं अपनो बुद्धि के अनुसार निर्णय दे देता हूँ।" मोहन ने कहा।

तीनों उसकी यह बात मान गयी।

"आप तीनों को एक साथ देख रहा हूँ। इसलिये किसी एक को ठीक तरह नहीं देख पा रहा हूँ। आप दूर चले जाइये और एक एक करके मेरे पास आइये।" मोहन ने कहा।

तीनों दूर अली गई। पहले भूपुत्री उसके पास आयी, ताकि वह उसके सौन्दर्य को अच्छी तरह देख सके। वह चारों ओर घूमती हुई कहने लगी-"मोहन, देख! अगर तूने यह फल मुझे दिया तो में वायदा करती हूँ कि किसी युद्ध में तेरी हार नहीं होगी। में यह वर भी दूँगी कि सौन्दर्य और बुद्धि में, तेरे समान इस संसार में कोई न हो।"



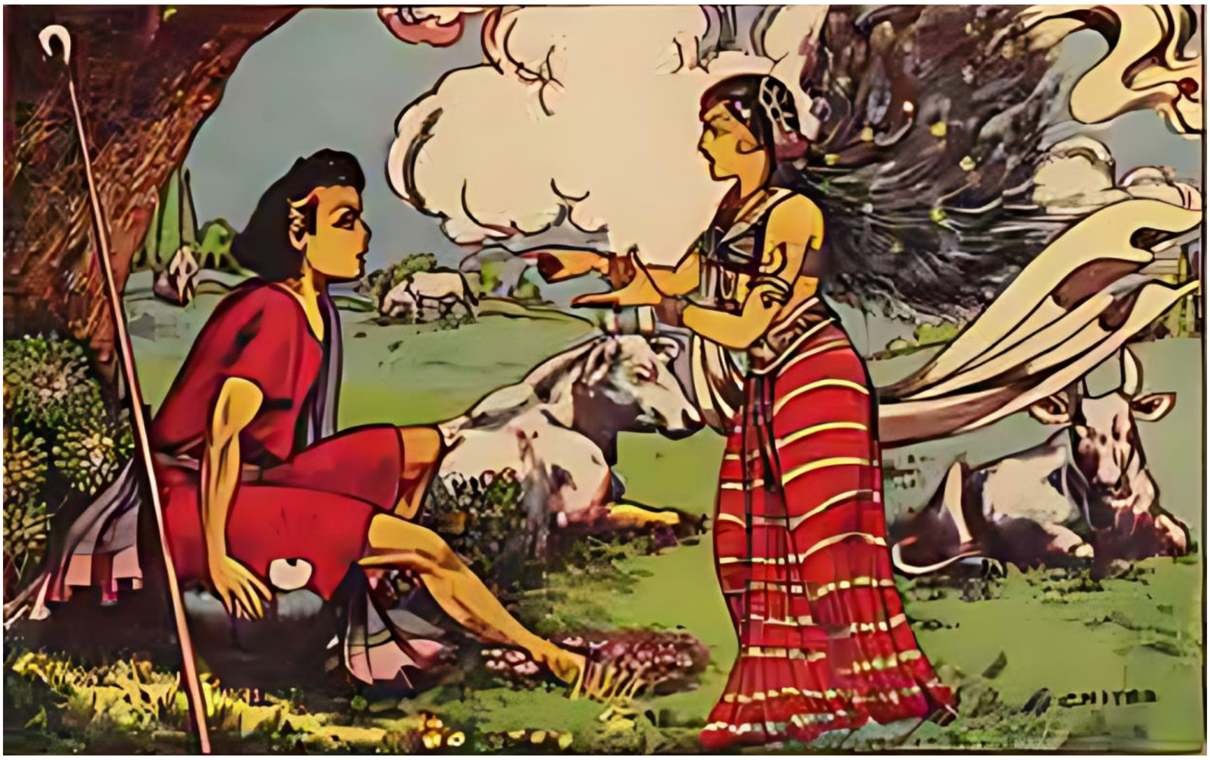
"देवी! मैं तो गड़रिया हूँ। मुझे युद्धों से क्या वास्ता और विजय से क्या सम्बन्ध?" मोहन ने कहा।

उसके जाने के बाद बुद्धिमती आई। "मोहन! अगर तुमने यह फैसला दिया कि तीनों में में ही सबसे अधिक सुन्दर हूँ, तो में तुम्हें सारे एशिया का राजा बना दूँगी। यह वर दूँगी कि संसार में तुम से अधिक कोई धनी न हो।" उसने मोहन से कहा।

"मैं घूस लेकर झगड़े का फैसला नहीं दुगा। माफ कीजिये।" मोहन ने कहा। अन्त में कामिनी आई । उसे देखते ही वह बोली-"मोहन! सारे फीजिया में तुम जैसे सुन्दर कोई नहीं है। सनमुच तुम जैसे की ही स्पार्टा देश की राजकुमारी भुवनसुन्दरी पत्नी होनी चाहिये।"

"उसका नाम भी मैंने नहीं सुना है।" मोहन ने कहा।

"नहीं सुना? ग्रीस के सब राजकुमार विवाह करने के लिये आये थे। परन्तु उसने राजा के भाई के साथ विवाह कर लिया। चाहते हो तो तुम्हें वह मिल सकती है। क्या कहना है?" कामिनी ने कहा ।





"पर उसकी तो शादी पहले ही हो गई है। अगर चाहूँ तो मुझे कैसे मिल सकती है?" मोहन ने पूछा।

कामिनी ने हँसकर कहा-"कुछ भी हो, यह मेरे जिम्मे रहा कि वह तुम्हें देखते ही तुम्हें चाहने लगे। उसके बाद, वह, घर-बार, पति, सब छोड़कर तुम्हारे पीछे आ जाएगी।" "भुवन सुन्दरी क्या सचमुच बहुत सुन्दर है?" मोहन ने पूछा।

"अरे पागल! वह सौन्दर्य में मुझ से कोई कम नहीं है।" हँसती हुई कामिनी ने मोहन से कहा।

"क्या तुम वायदा करती हो कि तुम उसे मुझे दिलाओगी?" मोहन ने कहा।

कामिनी ने इस बात की प्रतिज्ञा की। मोहन ने सोने का फल उसे दे दिया। इस वजह से बाकी दो अप्सराओ को उस पर गुस्सा आया। कुछ बुरा-भला कहने को वे आगे बढ़ी। पर चूँकि उन्होंने वचन दिया था कि वे उसका निर्णय मानेंगी, वे कुछ कर न पाई।

* * * *

भुवन सुन्दरी, सचमुच बहुत सुन्दर थी। नाजुक भी। वह साक्षात् देवनाथ की पुत्री थी। सुना जाता था कि वह हंस के अण्डे से पैदा हुई थी। बचपन से ही स्पार्टा का राजा मर्दन उसका पालन-पोषण करता आया था। जब वह सयानी हुई तो ग्रीस के सारे राजकुमार दूर दूर से उसको देखने स्पार्टा आये। उनमें देवमय, प्रताप, भूधर, रूपधर वगैरह भी थे। इनमें से सिर्फ रूपधर ही खाली हाथ आया। बाकी सब भुवन सुन्दरी के लिए अनगिनित उपहार लाये।

मर्दन के सामने यह बड़ी समस्या आई कि भुवन सुन्दरी को किसको दिया जाय। अगर एक को देता है, तो बाकी नाराज हो सकते हैं। इसलिए न उसने किसी के

साथ भुवन सुन्दरी का विवाह किया, न किसी के उपहार ही स्वीकार किये।

शुरू से ही सिर्फ रूपधर जानता था कि भुवन सुन्दरी का विवाह उसके साथ नहीं किया जायेगा। उसने मर्दन के पास जाकर कहा-"मैं जानता हूँ कि आप एक द्विविधा में हैं। आप मेरी मदद की कीजिए; और मैं आपको यह समस्या हल करने का उपाय बता दूँगा।"

"मैं तुम्हारी क्या मदद कर सकता हूँ और तुम मेरी समस्या कैसे हल कर सकते हो?" स्पार्टा के राजा मर्दन ने पूछा।

आप ऐसा कीजिये कि आपके भाई चन्द्रदत्त की लड़की पद्ममुखी का विवाह मुझसे कीजिये। फिर मेरी जिम्मेवारी यह होगी कि आप अपनी लड़की को चाहे किसी को दे कोई झगड़ा न करे। मैं इसके लिये एक तरीका बताऊँगा।" रूपधर ने कहा।

"तुम पहले उपाय बताओ। पद्ममुखी के साथ विवाह कराना मेरा काम रहा।" मर्दन ने वचन दिया।



तो फिर ऐसा कीजिये कि उन सब राजकुमारों को फिर बुलबाइये, जो भुवन सुन्दरी से विवाह करने के लिये आये थे। उन सब से यह शपथ करवाइये कि जिस किसी से वह विवाह करे, अगर उस पर किसी और के कारण कोई आपति आई, तो सब मिलकर उसकी मदद करेंगे। अगर ऐसा हुआ, तो उसका विवाह निर्विघ्न हो जायेगा।" रूपधर ने कहा।

यह उपाय मर्दन को पसन्द आया। उसने ग्रीक राजकुमारों को बुलाकर कहा-"तुम सब भुवन सुन्दरी से विवाह करना चाहते हो। परन्तु वह तुममें से एक के साथ ही विवाह कर सकती है। वह

जिससे विवाह करेगी, उसके विरुद्ध ईर्ष्यावश कई तलवार भी पकड़ सकते हैं। उस हालत में, तुम यह शपथ करो कि तुम सब उसके पति की मदद करोगे। तब ही उसके पति का निर्णय किया जा सकेगा।" राजकुमारों ने उसकी इच्छा के अनुसार शपथ ली। मर्दन ने तब भुवन सुन्दरी का विवाह प्रताप से कर दिया। कुछ दिनों बाद उसकी मृत्यु हो गई। उसकी जगह प्रताप स्पार्टा का राजा बना।

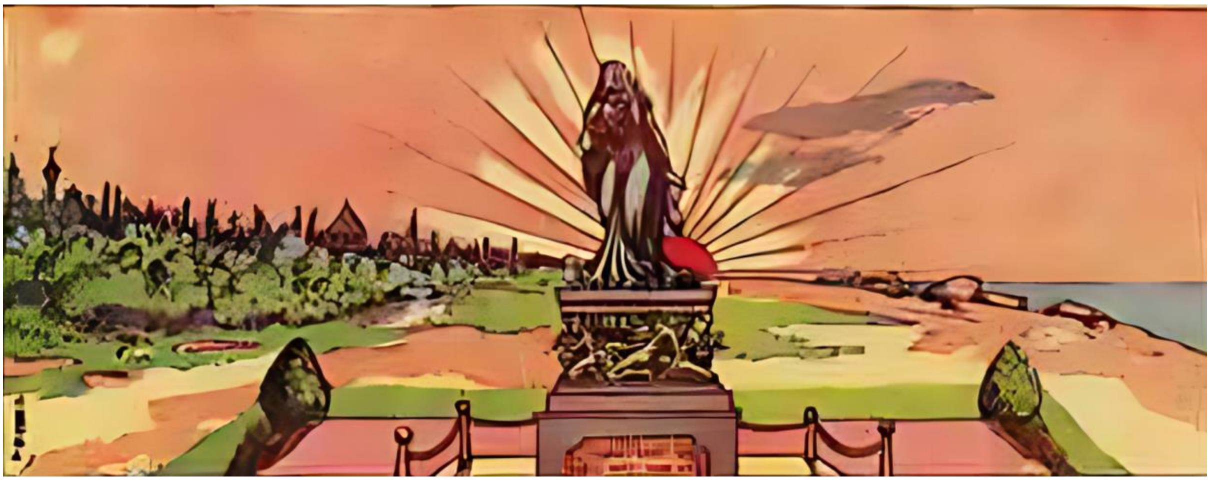
जब भुवन सुन्दरी का विवाह हो रहा था, तभी रूपधर और पद्ममुखी का भी विवाह हुआ। पद्ममुखी के पिता चन्द्रदत्त ने अपने जमाई से कहा-"बेटा! मैं अपनी लड़की को छोड़कर न रह पाऊँगा। तुम भी स्पार्टा में रहो।" पर रूपधर ने उसकी न सुनी। वह अपनी पत्नी को लेकर रथ पर बैठ गया।

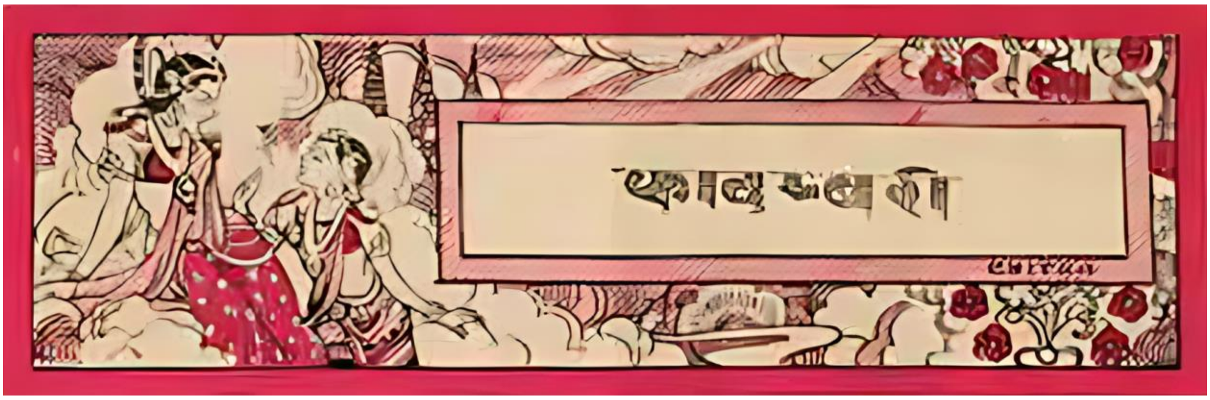
चन्द्रदत्त से रहा न गया। वह पागल की तरह रथ के पीछे भागता भागता चिल्लाने लगा-"अरी बेटी। मत जाओ, मत जाओ।"

ससुर का व्यवहार रूपधर को बिलकुल पसन्द न आया। उसका यों रथ के पीछे चिल्लाना बुरा लगा। उसने अपनी पत्नी से कहा-"क्या है यह? अगर तुझे मेरे साथ चलना है वो इच्छा से आ। नहीं तो मुझे छोड़कर अपने पिता के पास चला जा।" पद्ममुखी ने कोई जवाब न दिया। उसने अपने चेहरे का परदा और नीचे कर किया।

यह देख चन्द्रदत्त अपनी गलती समझ गया। पति के साथ जाना पत्नी का धर्म है। जिस स्थान पर वह घटना घटी थी, वहीं उसने अपनी लड़की की मूर्ति बनवाई। यह मूर्ति स्पार्टा नगर से चार मील दूरी पर अब भी है।

(अभी और है)





देवलोक में, एक गन्धर्व राजा की कादम्बरी नाम की एक लड़की थी। वह बहुत ही सुन्दर थी। उसकी महाश्वेता नाम की एक सहेली थी।

कादम्बरी और महाश्वेता, कभी भी एक दूसरे से अलग होकर न रहा करती। हमेशा साथ रहते। विवाह होने से कहीं उन दोनों को अलग न होना पड़ जाये, इसलिये उन्होंने विवाह न करने का निश्चय कर लिया था।

कादम्बरी के सौन्दर्य और गुण आदि के बारे में सुनकर चन्द्रमा उससे प्रेम करने लगा था। एक दिन, एकान्त में उसने कादम्बरी से अपने मन की बात कही। कादम्बरी भी न न कर सकी। वह भी चन्द्रमा को चाहती थी। पर महाश्वेता और उसका निश्चय उसको यकायक याद आया और वह कोई जवाब न दे सकी।

एक बार महाश्वेता फूल तोड़ने के लिए जङ्गल में गई। वहाँ उसको देखकर पुण्डरीक नाम के ऋषि पुत्र को उससे प्रेम हो गया। वह महाश्वेता के नज़दीक जाकर अपने प्रेम के बारे में कह रहा था कि उस तरफ पुण्डरीक का मित्र कपिञ्जल भी आया।

कपिञ्जल को स्त्री मात्र से क्रोध था, क्योंकि वह हमेशा तपस्या और अध्ययन में जुटा रहता। कपिञ्जल का विश्वास था कि स्त्रियाँ तपस्या में बाधा पहुँचाती हैं। इसलिए तपस्वियों को विवाह नहीं करना चाहिये। उसने तो निश्चय ही कर रखा था कि वह विवाह न करेगा और पुण्डरीक से भी निश्चय करवा लिया था कि वह भी विवाह न करेगा।

श्री प्रमोद कुमार विद्यार्थी



"मैं चन्द्रमा की बात भूल जाती हूँ। तुम भी पुण्डरीक की बात भूल जाओ।"

यद्यपि उस समय जङ्गल में पुण्डरीक ने कपिञ्जल से कह तो दिया था कि वह कभी महाश्वेता की बात न सोचेगा और उससे कभी न मिलेगा; तो भी भरसक भुलाने की कोशिश करने पर भी वह महाश्वेता को मुला नहीं पा रहा था। वह दिन-रात महाश्वेता की फिक्र में रहता। हमेशा उसी के बारे में सोचता रहता। इसी फ्रिक में वह बीमार भी पड़ गया। आखिर उसको कपिञ्जल से साफ साफ सब बातें कहनी पड़ीं।

कपिञ्जल पुण्डरीक पर जान देता था। उसकी हालत देखकर महाश्वेता पर उसका गुस्सा जाता रहा। वह स्वयं उसको पुण्डरीक के लिए लाने के लिए देव-लोक की ओर चल पड़ा। परन्तु महाश्वेता को भेजने के लिए कादम्बरी न मानी। उसे बहुत मनाया, फिर भी वह न मानी। कपिञ्जल ने दाँत कटकटाते हुये शाप दिया-"अच्छा! महाश्वेता के लिए मेरा मित्र पुण्डरीक प्राण छोड़ देगा। उसी तरह वह भी जो तुम से प्रेम करके विवाह करना

अब उसको पुण्डरीक महाश्वेता से बात करता दिखाई दिया। कपिञ्जल को गुस्सा आया और गुस्से में वह महाश्वेता को शाप देने को ही था कि पुण्डरीक उसके पाँवों पर पड़कर उसे मनाने लगा कि वह शाप न दे।

तब कपिञ्जल ने कहा-"अच्छा! अगर तुमने यह वचन दिया कि तुम इस लड़की के बारे में कभी न सोचोगे तो में शाप न दूँगा।"

पुण्डरीक ने उसकी बात मान ली। तब वह पुण्डरीक को अपने साथ लेकर चला गया।

यह बात जब कादम्बरी के कान तक पहुँची तो उसे बड़ा गुस्सा आया। उसने महाश्वेता को बुलाकर कहा-

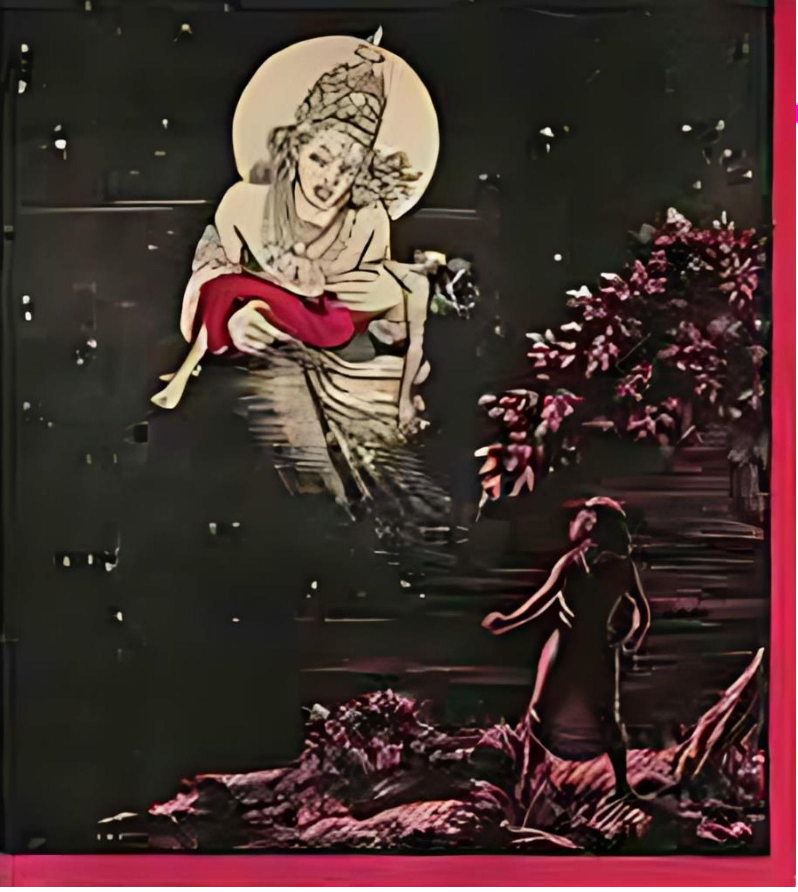
चाहता है, तड़प तड़प कर मर जाएगा। तुम भी उसके लिए दिन रात रोओगी। मेरी बात याद रखना।"



महाश्वेता तुरत कपिञ्जल के पैरों पर पड़कर रोने लगी-"आपने मेरी सहेली को क्यों इस तरह शाप दिया है? मैं आपके साथ पुण्डरीक के पास आऊँगी। आप अपना शाप वापिस ले लीजिये।" यह बात सुनकर कपिञ्जल का क्रोध कुछ शान्त हुआ। उसने कहा-"दिया हुआ शाप वापस नहीं लिया जा सकता। शाप के अनुसार उसका प्रियतम मरकर रहेगा। परन्तु में अपना शाप बदल दूँगा ताकि वह फिर जीवित हो सके।"

कादम्बरी से कहकर महाश्वेता कपिञ्जल के साथ पुण्डरीक को देखने गई। उसके आने में देरी हो गई थी और तब तक पुण्डरीक मर चुका था। महाश्वेता जोर जोर से रोने लगी, उसके साथ उसने सती होने की सोची। कपिञ्जल को भी दुःख हो रहा था कि उसी के कारण पुण्डरीक और महाश्वेता विवाह न कर सके थे। उसी के कारण न केवल उसके मित्र को ही प्राण छोड़ने पड़े थे, अपितु महाश्वेता भी अपने प्राण छोड़ने को सिद्ध हो रही थी। वह पछताने लगा।

यह बात जब कादम्बरी के पास पहुँची, तो उसने सोचा कि उसी के कारण महाश्रेता मर रही थी। कादम्बरी में परिवर्तन देख धीमे धीमे चन्द्रमा ने उससे सारी बात मालूम कर ली। कादम्बरी ने कहा कि महाश्वेता के बगैर वह एक क्षण भी जीवित न रह सकेगी। तब चन्द्रमा ने कहा-"यह मेरा काम रहा कि मैं महाश्वेता को मरने न दूँगा। तब क्या तुम मुझसे विवाह करोगी?" कादम्बरी यह मान गई।



महाश्वेता चिता पर सती होने को थी कि वह पुण्डरीक के शव को यकायक उठाकर ले गया।

चन्द्रमा का यह उद्देश्य था कि यदि पुण्डरीक का शव ही न रहा तो महाश्वेता को सती होने का भी मौका न मिलेगा।

पर कपिञ्जल भला क्यों मानता? उसने चन्द्रमा को रोककर कहा कि पुण्डरीक का शव वहाँ रख दो। पर चन्द्रमा न माना। तब कपिञ्जल ने शाप दिया-"तुमने मनुष्य की बात की परवाह नहीं की है, इसलिए तुम भी मनुष्य के रूप में भूलोक में पैदा होगे। तुम भी पुण्डरीक की तरह अपनी प्रियतमा के लिए तड़प तड़प कर मरो।" बात काफी बढ़ गई थी। भला चन्द्रमा भी किसी के पीछे क्यों रहता? "तुमने मुझे क्यों शाप दिया है? देखो, मैं भी तुम्हें क्या दण्ड देता हूँ! जब तक मैं भूलोक में मनुष्य के रूप में रहूँ तब तक तुम घोड़ा बनकर मुझे ढोते रहो।" शाप देकर, चन्द्रमा पुण्डरीक का शव लेकर उड़ गया।

चन्द्रमा और कपिञ्जल ने आपस में झगड़ कर एक दूसरे को शाप तो दे दिया था; पर महाश्वेता को पुण्डरीक का शव न मिल सका। इसलिए वह सतीब्रत न कर सकी। वह पुण्डरीक की पत्थर की प्रतिमा बना कर, रोज उस पर फूल चढ़ाकर उसकी पूजा करने लगी।

कपिञ्जल के शाप के कारण चन्द्रमा, भूलोक में राजकुमार के रूप में पैदा हुआ। वह कादम्बरी से विवाह न कर सका। उसका नाम चन्द्रापीड़ रखा गया। पुण्डरीक क्योंकि महाश्वेता से बिना विवाह किये, जबरदस्ती मर गया था; इसलिए फिर उसका जन्म हुआ।

जिस राज्य में चन्द्रापीड़ पैदा हुआ था, वह भी वहाँ के मन्त्री

के लड़के के रूप में पैदा हुआ। उसका नाम वैशम्पायन रखा गया। उधर चन्द्रमा का चन्द्रापीड़ के रूप में पैदा होना था, कि इधर कपिञ्जल खड़ा खड़ा सहसा घोड़ा हो गया। जङ्गल में रहनेवालों ने सोचा-"यह घोड़ा बहुत सुन्दर है, यह मामूली घोड़ा नहीं दीखता। इसलिए इस घोड़े को युवराज को उपहार में देंगे। वे उसे चन्द्रापीड़ को सौंप आये।

चन्द्रापीड़ को मन्त्री के लड़के वैशम्पायन से बड़ा स्नेह था। घोड़े के रूप में कपिञ्जल को चन्द्रापीड़ को ढोना तो पसन्द न था। परन्तु क्योंकि उसका परम मित्र पुण्डरीक वैशम्पायन के रूप में पैदा हुआ था और चन्द्रापीड़ के पास था, इसलिए उसको देखता देखता वह अपने कष्ट भूल जाता।

कुछ दिनों बाद, घोड़े पर सवार होकर चन्द्रापीड़ शिकार खेलने आया। साथ वैशम्पायन और उसके अन्य साथी भी गये। परन्तु जल्दबाजी में वे रास्ता भटक गये। सब इधर उधर बिखर गये। जङ्गल में एक गुफा के दीखने पर, उस में क्या होगा यह जानने के लिए घोड़ा



चन्द्रापीड़ को उसमें ले गया। उस गुफा में जाते जाते वे देव-लोक पहुँचे और वहाँ उन्हें कादम्बरी दिखाई दी। क्योंकि चन्द्रमा चन्द्रापीड़ के रूप में पैदा हुआ था और उसका पहले का आकार बदला न था, इसलिए कादम्बरी ने उसको आसानी से पहचान लिया। चन्द्रापीड़ को कादम्बरी के बारे में कुछ याद न था। परन्तु उसके सौन्दर्य पर मुग्ध हो वह वहीं पर रह गया।

चन्द्रापीड़ की खोज में जब वैशम्पायन सारा जङ्गल खोज रहा था तो पुण्डरीक की प्रतिमा को पूजा करती महाश्वेता दिखाई



दीं। उसको देखते ही वैशम्पायन को उससे शादी करने की इच्छा हुई और इस इच्छा को उसने उसके सामने व्यक्त भी किया।

महाश्वेता को यह न मालूम था कि वह पुण्डरीक ही था, जिससे पूर्व जन्म में उसने प्रेम किया था। उसने वैशम्पायन से कहा कि वह जिससे प्रेम करती थी, वह मर गया था। पर वह उसके साथ सती न हो सकी थी। इसलिए जीवन भर उसकी प्रतिमा की पूजा करने का निश्चय कर लिया था, और इसी कारण वह किसी और से विवाह न कर सकती थी। यह जब वह कह रही थी तो उसने सिर नीचे ही कर रखा था। वैशम्पायन की ओर भूलकर भी न देखा।

"तुम जिस पुण्डरीक की पूजा कर रही हो, वह मैं ही हूँ, महाश्वेता।" वैशम्पायन कह सकता था, पर वह यह बात जानता न था। वह उसे छोड़कर जा भी न पाता था। वह उसको मनाने लगा-"मैं तुमसे प्रेम करता हूँ, तुम मुझसे विवाह कर लो।" महाश्वेता को गुस्सा आ गया। उसने शाप दिया-"दुष्ट! तू एक प्रतिब्रता को क्यों इस तरह सता रहा है, और कहने पर नहीं जा रहा है? जा, तू एक तोता हो जा और टहनी टहनी पर अपना रोना रोता फिर।" तुरन्त वैशम्पायन तोता बन गया। "महाश्वेता! मैं तुझे प्रेम करता हूँ! प्रेम करता हूँ !" चिल्लाता चिल्लाता तोता जङ्गल में घूमने लगा और डाली डाली पर बैठकर यही बात कहने लगा।

और उधर देवलोक में, जहाँ चन्द्रापीड़ कादम्बरी के साथ था, उसको भूलोक, माँ, बाप और साथी वैशम्पायन की याद आई। चन्द्रापीड़ कादम्बरी से बिना कहे झट घोड़े पर चढ़कर, गुफा के रास्ते जङ्गल में आ गया। जो कोई उसे दीखता उससे वह पूछता-

"क्या तुम्हें वैशम्पायन दिखाई दिया था?" उसने मूर्ति की पूजा करती हुई महाश्वेता से भी यही पूछा। उसने बताया-"मैं नहीं जानती कि आपका वैशम्पायन कौन है। कोई आपको खोजता खोजता मेरे पास आया था और मुझे विवाह करने के लिए सताने लगा। मैंने तङ्ग आकर शाप दे दिया कि वह तोता हो जाये।" "अरे! अरे, वही वैशम्पायन है।" कहकर उस तोते के लिए चन्द्रापीड़ सारा जङ्गल खोजने लगा।

घोड़े के रूप में पैदा हुए कपिञ्जल को महाश्वेता को यह कहने की इच्छा हुई कि वैशम्पायन ही पुण्डरीक है। पर घोड़ा तो बात नहीं कर सकता है न! चन्द्रापीड़ को ढोता ढोता, वह भी उस तोते की तलाश करने लगा। सारा जङ्गल खोज डाला, पर वह तोता कहीं न मिला।

उपर कादम्बरी चन्द्रापीड़ को वहाँ न पा दुःखी हो रही थी। आज आयेगा, कल आयेगा, यह सोच रोज़ वह उसकी प्रतीक्षा करती रहती। इस बीच उसे कपिञ्जल का शाप याद आया। न जाने चन्द्रापीड़ को



क्या हो गया हो, यह सोच वह देवलोक से उतरकर जङ्गलों में उसे खोजती खोजती आई। पर जब वह वहाँ पहुँची तो उसको उस शाप का परिणाम नज़र आया, जो कपिञ्जल ने चन्द्रमा को दिया था।

वह चन्द्रापीड़ जो एक बार माँ-बाप और वैशम्पायन को देखकर वापिस चला जाना चाहता था, तोते के रूप में बदले हुए विशम्पायन को खोजता रहा। बहुत खोजा, पर वैशम्पायन कहीं न दिखाई दिया। अपनी प्रियतमा कादम्बरी और मित्र वैशम्पायन के बारे में सोचता एक दिन चन्द्रपीड़ महाश्वेता के आश्रम में गया, और

उसने वहीं अपने प्राण छोड़ दिये। उसके मरने के बाद, शव को देखकर कादम्बरी छाती पीट पीटकर रोने लगी। महाश्वेता की तरह उसने भी सती होने की सोची और उस के लिए वह तैयारी करने लगी।

इतने में वहाँ घूमता फिरता घोड़ा, क्यों कि चन्द्रपीड़ मर गया था और चन्द्रमा का शाप खतम हो गया था, यकायक कपिञ्जल के रूप में बदल गया।

रोते हुए कादम्बरी को देखकर कपिञ्जल को दया आई। उसने कहा-"कादम्बरी! दुखी मत हो। मैंने कहा था न कि चन्द्रापीड़ फिर जी उठेगा।" वह यह कह ही रहा था कि चन्द्रापीड़ फिर जी उठा। कादम्बरी तो खुश हुई पर उसको इसका दुःख बना रहा कि उसके कारण महाश्वेता अपने प्रियतम पुण्डरीक से विवाह न कर पाई थी। तब कपिञ्जल ने कहा-"जिस वैशम्पायन को तुमने तोता बना दिया था, वह अपना पुण्डरीक ही था। क्या अच्छा हो, अगर वह तोता मिल जाय।" तभी किसी जङ्गली ने आकर महाश्वेता को एक तोता दिया। यह तोता महाधता को देखते ही बोल उठा-"महाश्वेता! मैं तुमसे प्रेम करता हूँ।" चन्द्रापीड़ भागा भागा उसके पास गया। "यही हमारा वैशम्पायन है।" यों कह उसका उस पर हाथ रखना था कि वह वैशम्पायन के रूप में बदल गया और शाप विमुक्त हो गया।

कपिञ्जल का तब से स्त्रियों के प्रति क्रोध जाता रहा। उसे यह जानकर बड़ा दुःख हुआ कि उसके क्रोध के कारण ही उन्हें इतने कष्ट सहने पड़े थे। वह बहुत पछताया।





एक गाँव में एक ब्राह्मण परिवार रहा करता था। ब्राह्मण की पत्नी बड़ी भोली भाली थी। हमेशा कुछ न कुछ गलती कर बैठती और पति की डाँट सुनती। ब्राह्मण सदा सोचा करता कि कैसी मूर्ख पत्नी से उसका पाला पड़ा था। इसी अफ़सोस में उसके दिन कट रहे थे।

एक साल, गरमियों में उसने घर के लिए जरूरी चीजें; नमक, इमली, मिर्च, अरहर की दाल, मूँग, उड़द- सभी कुछ लाकर घर में रख, अपनी घरवाली से कहा-"चैत्र, वैशाख आ रहे हैं, लू में बाहर जाना मुश्किल हो जाएगा। इसलिए सभी चीजें अभी लाकर दे दी हैं।"

उसकी पत्नी ने सोचा कि शायद चैत्र और वैशाख कोई व्यक्ति है। उसने कहा-"अच्छा"। वह तब से सोचने लगी कि कब चैत्र वैशाख आते हैं, और कब वह उन्हें सब चीजे देती है। वह गली में बैठकर उनकी प्रतीक्षा करने लगी।

उस समय ब्राह्मण को किसी काम पर दूसरे गाँव में जाना पड़ा। जाते जाते उसने पत्नी को बुलाकर कहा- "घर की चीजें खतम न कर देना। चैत्र- वैशाख आ रहे हैं।"

आस-पड़ोस के दो किसानों ने भी उसकी यह बात सुनी। वे भी जानते थे कि ब्राह्मण की पत्नी कतई बेअक्ल थी। इसलिये ब्राह्मण के जाने के अगले दिन वे बेहंगी लेकर ब्राह्मण के घर पहुँचे। उन्होंने ब्राह्मण की पत्नी से कहा-"हम दोनों चैत्र वैशाख हैं। तेरे पति ने कहा

श्री बालकृष्ण प्रसाद



था कि वे हमें आटा-दाल देंगे। हम लेने के लिए आये हैं।"

सीधी-सादी ब्राह्मण की पत्नी ने समझा कि वे सच ही कह रहे थे। उन दोनों को बेंच पर बिठा दिया। फिर सारी चीजें उनको देकर उनको विदा किया।

चार दिन बाद ब्राह्मण आया। पति को घर के बाहर देखते ही पत्नी ने कहा-"आप कह गये थे न कि चैत्र वैशाख आयेंगे! वे आये थे। मैंने सोचा कि उनको आपके आने तक बिठाना बेकार है, इसलिए जो चीजे आप उनके लिए लाये थे, उन्हें देकर मैंने भेज दिया।"

ब्राह्मण भौंचक्का था। "जाय तेरी अक्ल। चैत्र वैशाख क्या हैं और उनका घर में आना क्या है? चैत्र वैशाख महीनों के नाम हैं। उन महीनों में गरमी पड़ती है, इसलिए मैंने कहा था कि चैत्र वैशाख आ रहे हैं और तूने यह काम किया है?" उसने उसे खूब डाँटा-डपटा।

* * * *

दिन गुज़रने लगे। पर कोई ऐसा दिन न गुज़रता, जब पत्नी को पति से खरी-खोटी न सुननी पड़ती। आह्मण पत्नी से तङ्ग आ गया। वह कोसता- "क्योंकि पर में कोई बड़े-बूढ़े नहीं हैं, इसलिए ही तेरी अक्ल खाक हो गई है। अगर घर में बड़े लोग हो तो तेरी करतूतें ऐसी न होगी।"

यह सुनते ही ब्राह्मण की पत्नी सोचने लगी कि यह "बड़े-बूढ़े" क्या बला है? उसने सोचा कि अगर उसने जैसे-तैसे कहीं से "बड़े-बूढ़े" पा लिये तो कम से कम पति की डाँट फटकार से तो बच सकेगी। तब से जो कोई घर में आता

जाता, वह उनसे कहती-"अच्छा होता अगर हमारे घर में कोई 'बड़े-बूढ़े' होते।"

यह जानकर एक ने ब्राह्मण की पत्नी को धोखा देने की ठानी। वह एक टोकरी मिट्टी के खिलौने रख कर, ब्राह्मण के घर के सामने चिल्लाता गुजरा......" बड़े-बूढ़े ले लो, बड़े-बूढ़े ले लो।" यह सुनते ही ब्राह्मण की पत्नी की जान में जान आई। उसने तुरन्त उसको बुलाकर भाव-सौदा किया। उसने कहा कि एक "बड़े-बूढ़े" की कीमत दो सौ रुपये हैं।

"अरे बाप रे बाप! मैं दो सौ रुपये कहाँ से लाऊँगी? चाहो तो मेरे गले का सोने का हार ले जाओ।"

उस आदमी ने कहा-"अच्छा, तो दे दो।" उसने वह बढ़िया हार ले लिया। और एक "बड़े-बूढ़े" को देकर चला गया।

जब यह बात हो रही थी तो घर में ब्राह्मण न था। ब्राह्मण की पत्नी "बड़े बूढ़े" को सजाकर, फूल चढ़ाकर, उसकी पूजा कर रही थी कि ब्राह्मण इस बीच में वापस घर आ गया। ब्राह्मण की पत्नी ने अपने पति से कहा-"आप रोज़ कोसा करते थे कि घर में कोई बड़े-बूढ़े नहीं है। मैंने



अपने गले का हार देकर एक 'बड़े-बूढ़े' को खरीद लिया है।" उसने 'बड़े-बूढ़े' का खिलौना दिखाया।

ब्राह्मण को काटो तो खून नहीं। वह चिल्लाने लगा-"अरी बेअक्ल, निगोड़ी....! बढ़िया सोने का हार देकर तूने यह मिट्टी का खिलौना खरीदा है। अब तू इस घर में एक क्षण नहीं रह सकती। जा निकल यहाँ से। ले जा अपने 'बड़े-बूढ़े' को।" उसने पत्नी को बाहर निकाल दिया।

बिचारी ब्राह्मण की पत्नी क्या करती? वह अपनी बे-अक़्ली पर अपने को कोसने-

कुढ़ने लगी। वह “बड़े-बूढ़े " को लेकर मायके के लिए निकल पड़ी।

जाते जाते रास्ते में जङ्गल आया। अन्धेरा हो गया। तब वह एक पेड़ पर चढ़कर बैठ गयी।

आधी रात के समय ठीक उसी पेड़ के नीचे कुछ चोर आकर चोरी के माल का बँटवारा करने लगे। उनको देखते ही ब्राह्मण की पत्नी के हाथ-पैर काँपने लगे। उसके हाथ का “बड़े बूढ़े" फिसलकर चोरों के बीच में गिर पड़ा।

उस अन्धेरे में किसी चीज़ के यकायक पड़ने पर चोर घबरा गये। उन्होंने सोचा कि कोई भूत वहाँ है। सब चोरी का माल वहाँ छोड़ छाड़कर वे चम्पत हो गये।

सवेरा हुआ। ब्राह्मण की पत्नी पेड़ पर से उतरी। चोरों के छोड़े हुए गहने-जवाहरात, सोना-चान्दी लेकर उसने एक पोटली बाँधी और "बड़े-बूढ़े" को लेकर वह अपने पति के घर की ओर चली।

उसने सारी घटना पति को सुनाकर कहा-"यह सब मेरे खरीदे हुए "बड़े-बूढ़े" की महिमा है। यह सच है कि मेरी वजह से आपका बहुत प्रकार से नुकसान हुआ है। परन्तु मैंने उससे चौगुना लाकर दे भी दिया है।" उसने चोरी का माल दिखाया। ब्राह्मण बड़ा खुश हुआ। तब से वे आपस में सलाह-मशवरा करके आराम से रहने लगे।

इसमें चाहे किसी की भी बुद्धिमत्ता हो पर सच तो यह है कि शुभ समय में ही "बड़े बूढ़े" खरीदा गया था। तभी से भाग्य उनका साथ देने लगा। कहते हैं बुद्धि भाग्य की अनुसारिणी होती है।





एक गाँव में एक ग्वाले का लड़का रहा करता था। वह गौओं को सवेरे चराया करता और दोपहर को आराम के लिए उनको एक पीपल के पेड़ के नीचे हाँक कर ले जाता।

कई दिनों तक वह यही करता रहा। फिर एक विचित्र घटना घटी। जब वह एक दिन पीपल के नीचे बैठा आराम कर रहा था तो उसे लगा जैसे पीपल का पेड़ कह रहा हो- "बेटा! एक बात सुनो। अगर तुमने मेरी जड़ में रोज दूध दिया तो तुम्हारा बड़ा भला होगा।" यह सुनकर उसे बड़ा ताज्जुब हुआ और तब से वह गौओं का दूध दुहकर, पेड़ की जड़ में डालने लगा।

वह कई दिनों तक, नियमपूर्वक दूध जड़ में देता रहा। फिर यकायक वहाँ की जमीन फटी और उसमें से एक साँप फण उठाकर, फुँफकारने लगा। यह देखकर वह लड़का घबरा गया।

"बेटा ! तुम डरो मत। कोई डरने की बात नहीं है। कुछ दुष्ट बिना किसी कारण के गढ़ा खोदकर मुझे यहाँ दबा गये थे। मेरी मरने की नौबत आ गई थी। परन्तु तुम्हारे दूध के कारण फिर जान आ गई। भले ही कितने जन्म लूँ, पर क्या तुम्हारा ऋण कभी मैं चुका सकूँगा? फिर भी इसके बदले में तुम्हें एक वर देना चाहता हूँ। तुम जरा मेरे पास आओ। कहकर साँप ने उसको बुलाया।

उसके पास आते ही सिर पर फूँककर उसने आशीर्वाद दिया- "बेटा! मेरी महिमा के कारण तुम्हारे सिर के बाल सोने के हो जाएँगे। इसके कारण तुम्हें एक

श्री कैलाशचन्द्र गुप्ता



सुन्दर स्त्री मिलेगी। फिर जो तुम सोचोगे वही होगा। तुम सौभाग्यशाली हो जाओगे। जाओ, यह मेरा आशीर्वाद है।" साँप ने खबरदार करते हुए कहा- "इस वर के बारे में ब्रह्मा, रुद्र किसी को भी कुछ नहीं मालूम होना चाहिए। यहाँ तक कि तुम्हारी सुन्दर पत्नी को भी इस बारे में न मालूम हो। अगर उसको इस बात का पता लग गया तो तुरन्त वर का प्रभाव जाता रहेगा।" ग्वाले का लड़का यह मान गया और खुश हो घर चला गया।

*   *   *   *

एक बार जब ग्वाले का लड़का, नहा-धोकर शरीर पोंछ रहा था कि चमचमाता बारह अंगुल का एक सुनहला बाल उसके सिर से झड़ गया। उसकी खुशी का हद न थी। उसने एक पत्ते का दोना बनाकर, बाल को उसमें रख, नदी मैं छोड़ दिया। वह दोना नदी में बहता हुआ चला गया।

नीचे, नदी में कोई राजकुमारी नहीं रही थी। उसको ग्वाले के लड़के का छोड़ा हुआ दोना मिला। जब उसने दोना खोला तो उसको बारह अंगुल का चमचमाता सोने का बाल दिखाई दिया।

उसने अपने पिता के पास जाकर कहा-"पिताजी! मैं एक ऐसे लड़के से ही विवाह करुँगी जिसके बाल इस तरह सोने के हो। नहीं तो में विवाह ही नहीं करूँगी; आजन्म कुँवारी रहूँगी।"

यह सुन राजा और रानी को बड़ा आश्चर्य हुआ। सोने के बालवाले लड़के की तलाश के लिए नौकर-चाकरों को सब तरफ भेजा। पर उन्हें कहीं भी बैसा लड़का नहीं मिला। वे वापिस आ गये। फिर गुप्तचरों को चारों कोनों में भेजा

गया। वे भी निराश हो वापिस चले आये। फिर उन्होंने बड़े-बड़े, सिद्ध साधुओं को हर देश में भेजा। वे भी वापिस आ गये। खोज का कोई फायदा न हुआ।

आखिर एक तोते ने कहा-"महाराज! सोने के बालवाले लड़के को में ढूँढ़कर लाता हूँ.... पर यह काम किसी मनुष्य के लिए सम्भव नहीं है। मैं ही कर सकता हूँ। मुझे पिञ्जरे में से छोड़ दीजिये। मैं उस लड़के को खोजकर ले आऊँगा। आप भी मेरी अक्लमन्दी को देखना।"

तुरन्त तोते को पिञ्जरे में से छोड़ा गया। उसे खूब खिला-पिलाकर भेज दिया गया। वह नदी पहाड़ पार कर, जङ्गल में गया। उसने वहाँ ग्वाले के लड़के को देखा। तब पता है, उसने क्या किया? वह एक एक पशु के ऊपर से फुदकता गया और कुछ दूरी पर बैठे ग्वाले के लड़के को उसने देखा। फिर झपटकर उसके हाथ से बांसुरी चोञ्च में लेकर पेड़ पर जा बैठा।

ग्वाले का लड़का, बाँसुरी के लिए तोते के पीछे चलने लगा। वह एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर; दूसरे से तीसरे



पेड़ पर होता, राजकुमारी के अन्तःपुर की ओर जाने लगा। और ग्वाले के लड़के की यह हालत थी कि वह अपने गौओ को भूल गया था। वह तोते के पीछे पीछे अन्तःपुर में घुसा।

तोता खुशी में था कि उसका काम स्वतम हो गया है। वह सीधे राजकुमारी के पास गया और उसकी गोदी में बांसुरी फेंक कर उड़ गया।

ग्वाले के लड़के ने राजकुमारी से बासुरी देने के लिए कहा। राजकुमारी ने तब कहा-"अगर तुम मुझ से शादी करोगे तो दे दूँगी, नहीं तो नहीं दूँगी।" उसे

यह सुन बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने पूछा-"बिना सगाई स्वयंवर के विवाह कैसे किया जा सकता है?"

"सगाई और स्वयंवर सभी उसी दिन हो गये थे जिस दिन नदी में मुझे वह दोना मिला था।" कहते हुए उसने वह दोना दिखाया।

तब उसको याद आया कि यह सब उस साँप के दिये हुए वर की महिमा भी। इसलिए वह विवाह के लिए मान गया। थोड़े दिनों में उनका बड़े धूम-धाम से विवाह भी हो गया। राजा ने न केवल विवाह में अपनी लड़की ही दी, परन्तु उसे अपना आधा राज्य भी दे दिया।

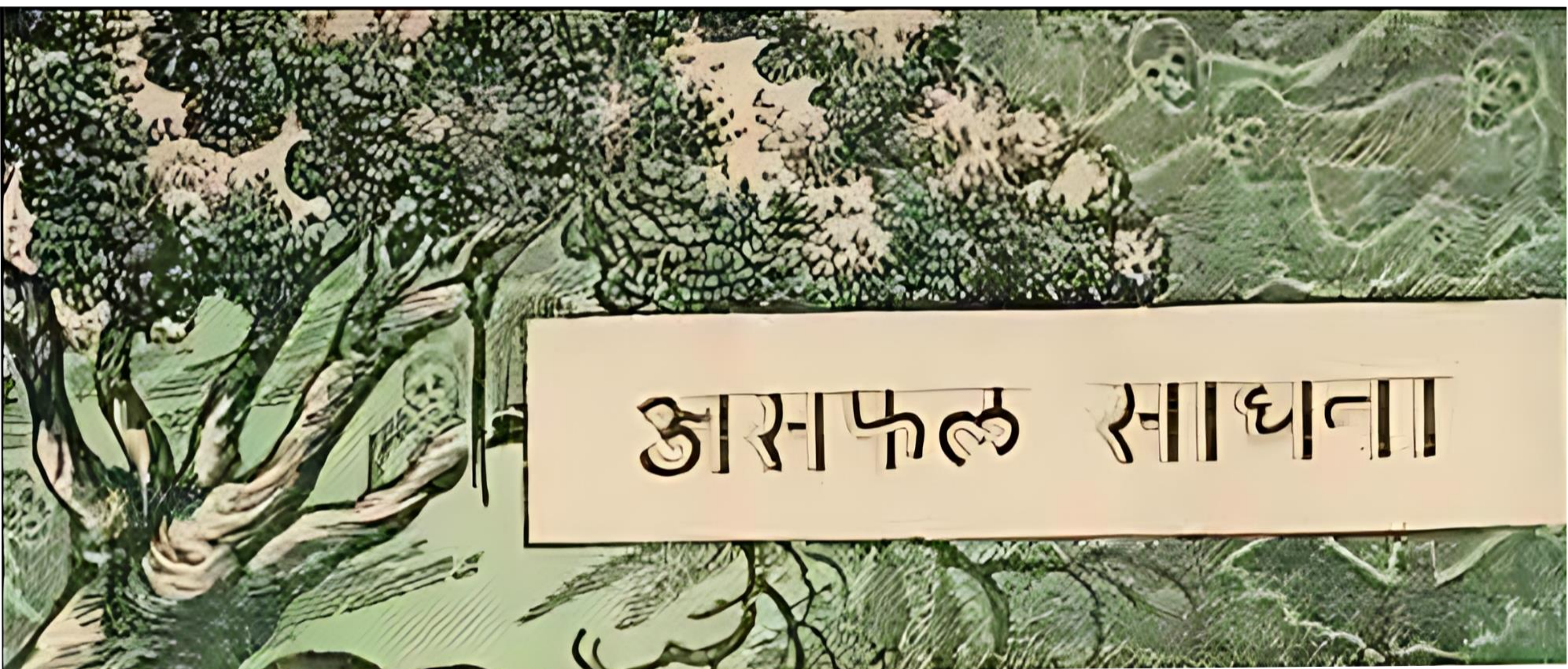
भाग्य उसके साथ था। ग्वाले का लड़का आराम से ज़िन्दगी बसर कर रहा था। कुछ दिनों बाद, उसको जङ्गल में छोड़ी हुई अपनी गौओ का खयाल आया। जब उन्हें देखने वह जा रहा था, तो उसकी पत्नी ने भी कहा कि वह उसके साथ जाएगी।

जब दोनों मिलकर जङ्गल में गये तो गौओ के झुण्ड में एक भी जिन्दा न थी, सब मरी पड़ी थी। परन्तु साँप का दिया हुआ दूसरा बर उसको याद आ गया। तब उसने मन में चाहा कि "मेरी गौए फिर जी उठे।"

तुरन्त गौएँ पूँछ हिलाती हिलाती उठ खड़ी हुई। वह बड़े सन्तोष से, गौओं के उस झुण्ड को अपनी राजधानी में हाँक ले गया।

इस संसार में अच्छी नीयतवालों का और जो अपना वचन पूरा करते हैं, उनका हमेशा भला ही होता है।





असफल साधना



हठी विक्रमार्क, पेड़ के पास फिर गया। शव को उतार, कन्धे पर डाल, शमशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित वेताल ने कहा- "राजा! तुम्हें इस समय मोटे गद्दी पर आराम से सोना चाहिये था। मालूम नहीं तुम क्यों उपासक की तरह इतनी मेहनत कर रहे हो। साधना हमेशा सफल नहीं होती। यह दिखाने के लिए मे तुम्हें एक विचित्र कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यह कहानी सुनानी शुरू की।

किसी जमाने में चन्द्रप्रभु उज्जयिनी नगर का राजा था। देवस्वामी नाम का एक ब्राह्मण उसका मन्त्री था। वह बहुत धनी था। उसका एक लड़का था, जिसका नाम चन्द्रस्वामी था। वह छुटपन में सो खूब पढ़ता लिखता रहा, पर बड़े होते ही

जुआरी हो गया। सिवाय दिन-रात जुआ खेलने के उसे और कुछ न सूझता।

एक बार जब वह गली में जा रहा था, तो उसको जुए की एक दूकान दिखाई दी। जुआ खेलनेवालों का होहल्ला सुन, वह भी वहाँ घुसा और उनके साथ खेलने लगा। दुर्भाग्य से न केवल वह अपना ही धन खो बैठा, अपितु वह औरों से उधार भी ले बैठा।

यही उसका नित्य प्रति दिन का कर्यक्रम था। दो-एक दिन के बाद उन्होंने अपना रुपया माँगना शुरू किया। वे यह नहीं जानते थे कि वह कौन था। अगर वह यह कहता कि वह मन्त्रो का लड़का था तो शायद वे उसे पैसे के लिए न सताते। अगर यह बात उसके पिता की मालूम हो जाती कि वह जुआ खेल रहा था तो उसकी और उसके पिता की मान-प्रतिष्ठा मिट्टी में मिल जाती। इसलिये बिना कुछ कहे सिर नीचा करके चन्द्रस्वामी बैठ गया।

जुआरियों को गुस्सा आ गया और उन्होंने लाठियों से उसकी अच्छी मरम्मत कर दी। चन्द्रस्वामी बेहोश होकर गिर गया। दुकानदार रात होने तक देखता





मालिक से जाकर कह देंगे कि कुएँ में फेंक दिया है।" नौकरों ने आपस में यों तय कर लिया और उसको जङ्गल में एक जगह फेंक वे वापिस मालिक के पास चले गये।

तुरत चन्द्रस्वामी उठा। परन्तु चोटों के कारण सारा शरीर लहू-लुहान था। वह कराहता कराहता जैसे तेसे चलता चलता सवेरे एक योगी के आश्रम में पहुँचा। योगी ने उसे देखते ही कहा-"आओ बेटा। बहुत दुबले हो गये हो। आओ, मैं तुम्हें तुम्हारे मन के मुताबिक भोजन दूँगा।" चन्द्रस्वामी यह सोच आश्चर्य करने लगा कि उस जङ्गल में, वह उसके मन के मुताबिक भोजन कैसे देगा।

उस योगी को कई सिद्धियाँ पाप्त था। उसने एक शक्ति को बुलाकर कहा-"इस अतिथि का आतिथ्य करो।" तुरन्त चन्द्रस्वामी के चारों ओर एक सोने का शहर बन गया। उसको सामने एक बड़ा महल दिखाई दिया। उस महल में से कई स्त्रियों ने आकर कहा-"आइये, पधारिये।" उसकी अगवानी की।

वह उनके साथ गया। उन्होंने उसको नहला धुलाकर उसको पहनने के लिए

रहा। पर चन्द्रस्वामी वहाँ से न हिला। दुकानदार को डर लगा कि कहीं वह मर न गया हो। इसलिये उसने आधी रात में अपने नौकरों को बुलाकर कहा-"सवेरा होने से पहले जङ्गल में किसे पुराने कुएँ में इसे डालकर आओ।" नौकर चन्द्रस्वामी को ढोकर अन्धेरे में ही जङ्गल गये। बहुत दूर गये, पर उन्हें न कोई पुराना कुआँ ही मिला, न गढ़ा ही, और कदम कदम पर मुर्दे का भार बढ़ता-सा लगता था।

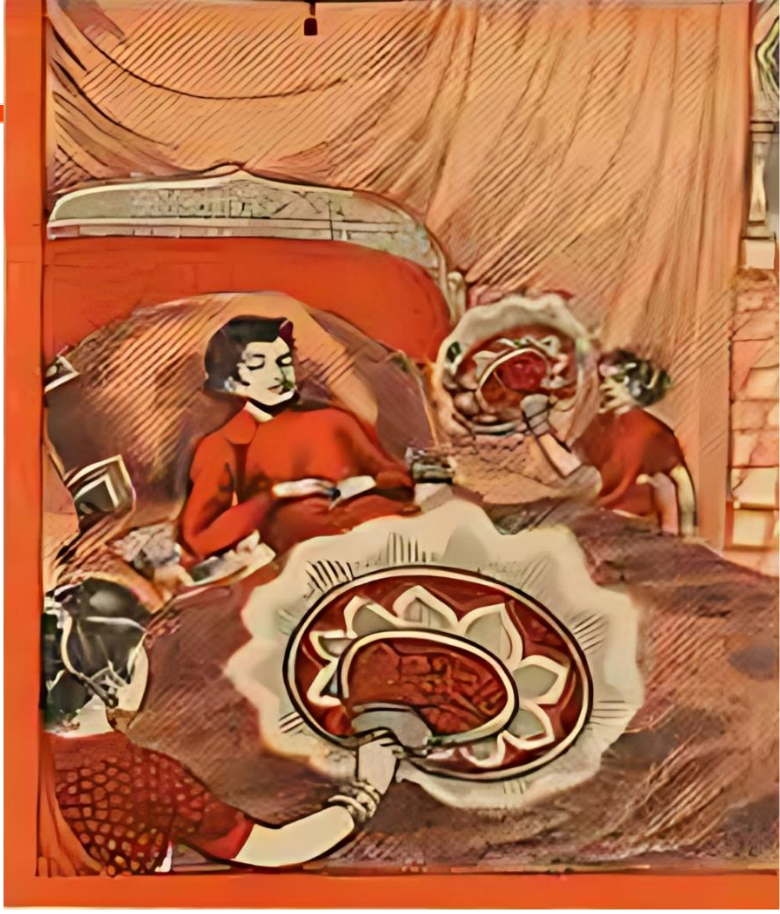
"इस मुर्दे को और कितनी दूर ले जाना होगा? यहाँ कोई कुआँ नहीं है। हम इसे यहीं छोड़ देते हैं और

अच्छी पोशाक दी। उसके शरीर पर इत्र आदि लगाये। फिर उसको बहुत अच्छा भोजन परोसा। उसके साथ एक बहुत सुन्दर स्त्री ने भी बैठकर भोजन किया। भोजन करने के बाद, चूंकि वह बहुत थका हुआ था, इस लिए मोटे मोटे गद्दों पर लेटते ही उसे नींद आ गयी। थकान मिटने पर फुरसत से उस स्त्री से बातचीत करने की उसने ठानी थी।

परन्तु जब वह उठा तो उसके सामने योगी की कुटिया थी और चारों ओर घना जङ्गल था। न नगर था, न स्त्रियाँ थी और न महल ही थे। योगी ने उसके पास आकर पूछा-"क्यों बेटा! आतिथ्य में तो कोई कमी न थी? सब कुछ ठीक था न?"

आपकी कृपा से सब कुछ आराम से हो गया। परन्तु मैंने एक सुन्दर युवती को देखा था। उनसे मिलने की मेरी बड़ी इच्छा हो रही है।" चन्द्रस्वामी ने कहा।

"पगले! जो तुमने देखा था, क्या तुम्हें वह सच लगा था? वह मेरी सिद्धि के प्रभाव द्वारा तैयार किया हुआ भ्रम-मात्र था।" योगी ने कहा।



"ऐसी बात है तो मुझे भी कृपया यह सिद्ध सिखाइये महानुभाव।" चन्द्रस्वामी ने योगी से प्रार्थना की। "बेटा! यह सिद्धि आसानी से नहीं पाई जाती। तुम इसके लिए प्रयास नहीं कर सकते। इसके लिए पानी में डूबकर तपस्या करनी होती है। जब साधक यह तपस्या कर रहा होता है तो माया उसे घेर लेती है, जैसे वह फिर पैदा हुआ हो और बच्चों वाला हो गया हो। वह सब सच जान वह अपनी साधना छोड़ देता है। इस तरह जो तीस वर्ष तक उस भ्रम में ही अपना जीवन व्यतीत करता है और उस भ्रम में ही अग्नि-प्रवेश करता है, वह साधक

ही यह सिद्धि प्राप्त कर पानी से बाहर आता है। ऐसे साधकों के सिवा दूसरे लोगों को यह सिद्धि नहीं मिलती। इस लिए तुम अपना इरादा बदल लो।

चन्द्रस्वामी ने हठ करते हुए कहा- "नहीं.... मैं यह सिद्धि प्राप्त कर लूँगा।"

अगर तुम्हारी साधना सफल न हुई, तो तुम्हें सिद्धि न मिलेगी, और मेरी सिद्धि भी जाती रहेगी।" योगी ने उसको सावधान किया।

"मैं आपको किसी प्रकार की हानि न होने दूँगा।" चन्द्रस्वामी ने कहा।

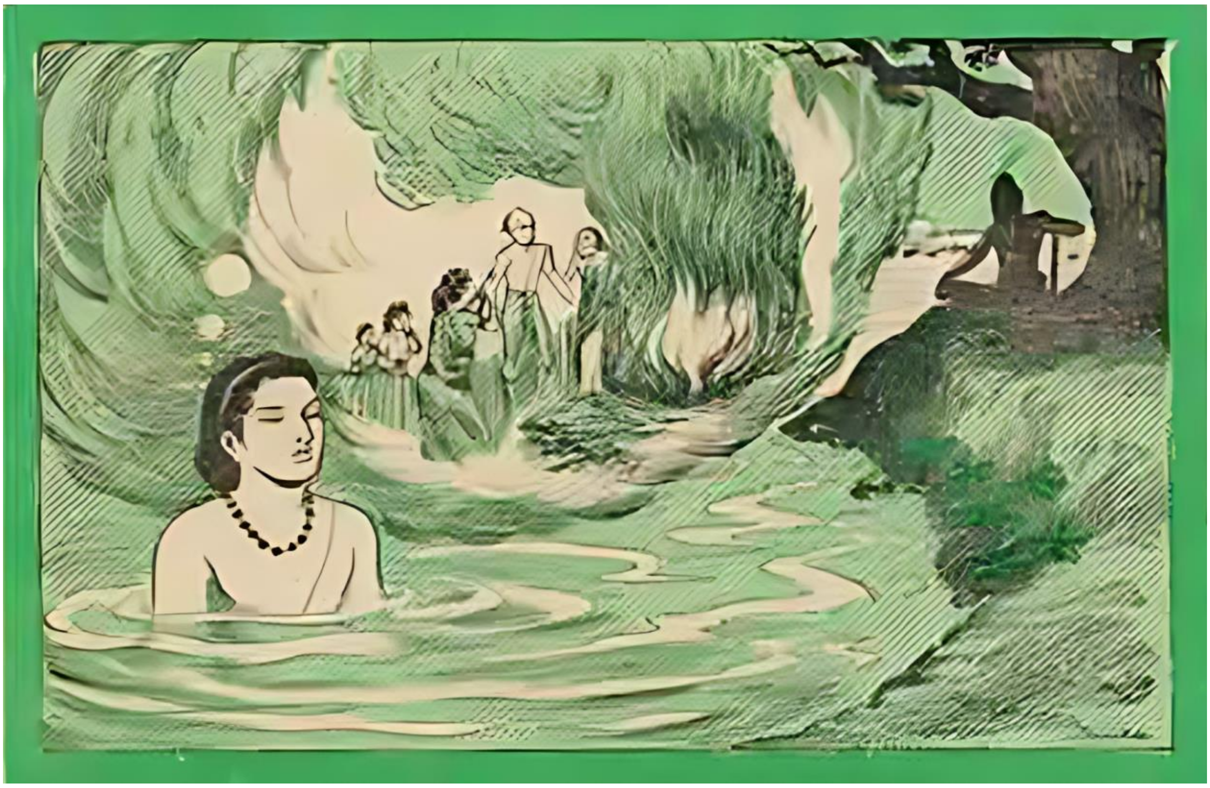
योगी क्या करता? सिद्धि देने का निश्चय कर उसने कहा-"अच्छा! तुम्हारे पानी में डूबने के बाद, जब अग्नि प्रवेश का समय आयेगा, तब मैं तुम्हें बताऊँगा। तब तुम निस्सङ्कोच अग्नि प्रवेश करो। अगर तब तुम भूल गये कि वह भ्रम है, कम से कम मेरे याद दिलाने पर उसे याद कर लेना।" चन्द्रस्वामी योगी की यह बात भी मान गया।

फिर योगी ने स्वयं स्नान किया और चन्द्रस्वामी को भी नहलाया। उसको एक मन्त्र सिखलाकर, उससे पानी में डूबकर वह मन्त्र जपने के लिए कहा।



योगी के कहने के अनुसार सब हो गया। चन्द्रस्वामी को लगा, जैसे वह किसी ब्राह्मण के घर पैदा हुआ हो। वह बड़ा होता गया। उसका उपनयन हुआ और वह विद्याभ्यास करने लगा। उसकी शादी हुई। बच्चे पैदा हुए। वे भी बड़े होने लगे। बीबी-बच्चों के साथ उसका जीवन आराम से गुजरने लगा। इतने में चन्द्रस्वामी को गुरु की आवाज़ सुनाई दी। उसे याद हो आया कि वह सिद्धि के लिए साधना कर रहा था। अब अग्नि प्रवेश करना था। उस भ्रम में ही वह अग्नि प्रवेश के लिए तैयार हो गया।

परन्तु उसके बन्धु बान्धव बड़े-बुजुर्ग, पत्नी-पुत्र उसके चारों ओर खड़े होकर बुरा-भला कहने लगे-"नहीं नहीं! मत घुसो।" वह डर गया। उसने सोचा-"अगर मैं मर गया तो इन सब का क्या होगा?" उसको योगी के अग्नि प्रवेश वाली बात याद आ गई। उसे सन्देह होने लगा कि उन्होंने जान बूझकर कहा था या बिना जाने ही उसको यह समझ में नहीं आया। परन्तु आखिर चन्द्रस्वामी दिल पक्का करके अग्नि में घुस ही गया। पर अग्नि जली नहीं। चन्द्रस्वामी पानी से बाहर निकलकर



खड़ा हो गया। उसका सारा भ्रम जाता रहा। योगी किनारे खड़ा हुआ दिखाई दिया। चन्द्रस्वामी ने योगी के पास आकर नमस्कार करके कहा-"स्वामी! मैंने सब कुछ आपके कथनानुसार कर दिया है। परन्तु जब मैने अग्नि में प्रवेश किया तो अग्नि ठण्डी क्यों थी?"

"तुमने कोई गल्ती की है। अग्नि ठण्डी कैसे हो सकती है?" योगी ने पूछा।"

"मैंने ठीक वैसे ही किया जैसे कि आपने बताया था।" चन्द्रस्वामी ने कहा।

"अभी सच मालूम कर लेते हैं।" उसने अपनी सिद्धि का उपयोग किया। पर सिद्धि का कोई फल न हुआ। योगी की आँखों में आँसू छकहलाने लगे-"तुम्हें तो सिद्धि मिली नहीं, मेरी भी चली गई।"

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा-"चन्द्रस्वामी ने सब कुछ ठीक ही किया था। फिर उसे सिद्धि क्यों नहीं मिली? गुरु की सिद्धिः क्यों चली गई? मैं इस सन्देह को दूर न कर सका। अगर तुमने जान बूझकर मेरा सन्देह दर न किया तो तुम्हारा सिर फोड़ दूँगा।"

"तुम मुझसे बुलवाने के लिए यह पूछ रहे हो? नहीं तो इसमें सन्देह की गुञ्जाइश ही कहाँ है? चन्द्रस्वामी, यह जानकर कि उसका भ्रम सच है अग्नि में प्रवेश करने के लिए हिचकिचाया था। इसीलिये उसको सिद्धि न मिली। अपात्र को विद्या देने के कारण गुरु की सिद्धि भी जाती रही। इसके सिवाय कोई दूसरा कारण नहीं है।" विक्रमार्क ने बेताल से कहा।

राजा का इस प्रकार मीन-भङ्ग होते ही बेताल शव के साथ, फिर पेड़ पर जा बैठा।



CHANDAMAMA (Hindi) DEEPAVALI NUMBER 1956 Regd. No. M. 6403



जंगल में मंगल !